देखी सुनी

वर्ष 2010, अंक 12

प्रिय साथियों !

नव वर्ष की हार्दिक शुभकामनाएं।

इस बार के अंक में हम लेकर आए हैं महिलाओं के विरुद्ध उनकी विभिन्न पहचानो के आधार पर होने वाली क्रमबद्ध हिंसा व उनके पितृसत्तामक समाज से अपने अधिकारों की लड़ाई का लेखा जोखा। इसमे शामिल है कन्या भ्रूण हत्या, बालिकाओं के विरुद्ध होने वाली हिंसा, एकल महिला व उसके अधिकार, विवाह के भीतर व बाहर होने वाली हिंसा, दहेज, सार्वजनिक स्थल पर हिंसा, देह व्यापार पर सवाल व जागोरी द्वारा 16 दिवसीय महिला हिंसा विरोधी अभियान के तहत दिल्ली सरकार के साथ सुरक्षित दिल्ली अभियान के प्रारम्भ की कुछ झलकियां। आशा करते है आपको हमारा यह प्रयास सराहनीय लगेगा। आपके सहयोग, मार्गदर्शन, टिप्पणी एंव सराहना की हमे हमेशा प्रतिक्षा रहती है।

जागोरी संदर्भ समूह

महिलाओं पर हिंसा विरोधी दिवस
चार राज्य, चार केस

देश में ही क्या पूरी दुनिया में महिलाओं के खिलाफ हिंसा बहुत तेजी से बढ़ता अपराध है। 1960 में डोमिनिक गणराज्य में तीन बहनों की हत्या की याद में संयुक्त राष्ट्र हर साल 25 नवंबर को इस तरह की हिंसा के अंत के लिए अंतरराष्ट्रीय दिवस मनाता है। **राजस्थान, हरियाणा, मध्यप्रदेश, छत्तीसगढ** के ये चार केस हमारे देश में घरेलू हिंसा की बानगी पेश करते हैं।

घर से बेदखल, पर जिंदा है जूझने का जज्बा

पति की मौत के बाद ससुराल वालों से संघर्ष

जयपुर. केंद्र की जिस कांग्रेस सरकार ने घरेलू हिंसा पर रोक लगाने के लिए महिला संरक्षण कानून लागू किया, उसी कांग्रेस के एक नेता के परिवार के उत्पीड़न के कारण विधवा बहू को संघर्ष करना पड़ रहा है।

जयपुर की सिविल लाइंस निवासी राजस्थान कांग्रेस के सचिव वीरेंद्र पूनिया के बेटे विश्वास ने 1998 में ऐश्वर्या कौशिक (29) से प्रेम विवाह किया था। मई 2008 में ऐश्वर्या अपने जॉब से घर लौटीं तो घर वाले लहूलुहान विश्वास को अस्पताल ले जा रहे थे।

उन्हें बताया गया कि विश्वास ने गोली मारकर आत्महत्या की है। इसके 40 दिन के बाद ऐश्वर्या को संपत्ति से वंचित करते हुए घर से निकाल दिया गया। ऐश्वर्या को शक है कि पति की मौत के पीछे जेठ विक्रम का हाथ है। अजमेर रोड पर माता-पिता के साथ रह रहीं ऐश्वर्या ने वीरेंद्र पुनिया, सास सरला व विक्रम सहित छह लोगों के खिलाफ घरेलू हिंसा का मामला दर्ज करा रखा है। प्रभावशाली परिवार के खिलाफ वह अपने बूते संघर्ष कर रही हैं। कानूनी लड़ाई व दैनिक जीवन के खर्च के लिए वह किसी पर भार बनने के बजाय प्राइवेट जॉब कर रही हैं। पांच वर्षीय बेटे को भी वह बेहतरीन परवरिश दे रही हैं। ऐश्वर्या ने संपत्ति पर हक व भरण-पोषण के लिए सेशन कोर्ट का दरवाजा खटखटाया है।

एनआरआई से शादी की हरसत भारी पड़ी

अंबाला. एनआरआई से शादी कराने की पिता की हसरत ने गुरजीत कौर (बदला हुआ नाम) की जिंदगी को संघर्ष में बदल दिया है। सेना से रिटायर पिता ने अपने जमा-पूंजी लगाकर बेटी गुरजीत कौर की 2006 में एनआरआई युवक से धूमधाम से शादी कराई। दूल्हे की हर मांग पूरी की। हालांकि ससुराल में सुकूनभरे एक हफ्ते के बाद सास की फटकार व पति की डांट-डपट का सिलसिला शुरू हो गया। उसे घर से बाहर नहीं जाने दिया जाता था और फोन भी नहीं करने देते थे। इस बीच पति कनाडा चला गया। वह विदेश जाने की उम्मीद में सब कुछ सहती रही।

हालत जब बर्दाश्त से बाहर हो गई तो उसने माता-पिता को हाल सुनाया। उन्होंने कह-सुनकर सुलह कराई। इस दौरान उसे बेटा हुआ पर हालत में कोई बदलाव नहीं हुआ। इस बीच, उसका पति तो लौटा नहीं, सास व परिवार के अन्य लोग भी उसे छोड़ विदेश चले गए। वह गत दो साल से माता-पिता के साथ रह रही हैं। पति व ससुराल वाले उसका फोन तक रिसीव नहीं करते। हर तरफ से निराश गुरजीत अब सिलाई करके अपनी रोजी-रोटी चला रही है। न्याय की आस में अब गुरजीत के पिता कानूनी कार्रवाई की तैयारी कर रहे हैं और गुरजीत अब खुद को लंबे संघर्ष के लिए तैयार कर रही हैं।

पहले बच्चों से दूर किया फिर शुरू हुई प्रताड़ना

भोपाल. समृद्ध परिवारों में भी महिलाओं को हिंसा, अत्याचार व अन्याय का शिकार बनाया जाता है। भोपाल के गुलमोहर कॉलोनी की नीला मेहरा (परिवर्तित नाम) की करुण कथा यही कहती है।

नवंबर 1997 में नीला का विवाह कंप्यूटर व्यवसायी शिवम भल्ला (परिवर्तित नाम) से हुआ। शादी के बाद ही पति व सास ने उसे प्रताड़ित करना शुरू कर दिया। उसे हर सुख-सुविधाओं से वंचित रखा जाता था। हद तो तब हुई जब नीला ने बेटी को जन्म दिया। बेटी को सिर्फ दूध पिलाने के लिए उसे सौंपा जाता था। जब बेटी बड़ी हुई तो सास बाहर जाते समय उसे भी साथ ले जाने लगी ताकि वह मां से न मिल सके। जब उसने बेटे को जन्म दिया तो उसे भी उससे दूर रखा जाने लगा। विरोध करने पर नीला को मारा-पीटा जाता था। 11 साल तक यह सिलसिला जारी रहा। अंततः 16 दिसंबर 2008 की रात उसे धक्के देकर घर से निकाल दिया गया। जनवरी 2009 में बच्चों की कस्टडी के लिए नीला ने भोपाल जिला न्यायालय में मामला दर्ज किया। घरेलू हिंसा के मामले में भी अपील दायर की है। मामला विचाराधीन है। नीला इंदौर में अपने माता-पिता के साथ रह रही हैं। उसके मुताबिक शादी वाले दिन वर व वधु पक्ष के बीच हुई नोंक-झोंक सारे मामले की जड़ है, जिसका बदला उससे आज तक लिया जा रहा है।

शादीशुदा ने प्रेम के जाल में फंसाया

रायपुर. शहर की पॉश कॉलोनी में रहने वाली सरिता (नाम परिवर्तित) ने प्रेम विवाह किया था, लेकिन घरेलू हिंसा, मानसिक प्रताड़ना के बाद वह लंबे संघर्ष में बदल गया है। ग्यारह साल पहले सरिता ने मुकंद (परिवर्तित नाम) से प्रेम विवाह किया था।

बाद में दोनों के परिजनों की सहमति से आर्य मंदिर में शादी के जरिए इसे अरेंज मैरिज में बदला गया। लेकिन कुछ ही माह बाद सरिता पर तब वज्रपात हुआ जब उसे पता चला कि मुकंद तो पहले से विवाहित है और उसकी पत्नी व 10 साल की बच्ची इसी शहर में रहती है। मुकुंद के घरवालों ने भी यह बात उससे छिपाई। सरिता ने इस धोखाधड़ी का विरोध किया तो ससुराल में प्रताड़ित होने के बाद मायके लौटना पड़ा। मामला परामर्श केंद्र से होता हुआ फैमिली कोर्ट गया। ससुराल वालों ने यह साबित करनी की कोशिश की कि शादी कभी हुई ही नहीं। मायके में रह रही सरिता को घर में घुसकर डराने-धमकाने की कोशिशें हुईं।

आखिर तलाक हुआ। सरिता व उसकी 10 साल की बच्चे के लिए क्रमशः 500 व 700 रुपए गुजारा भत्ता मंजूर हुआ, जो उसे कभी दिया नहीं गया। सरिता महिला आयोग से गुहार लगाई तो वहां उसकी मुलाकात समर्पण वेलफेयर सोसायटी की डायरेक्टर अपर्णा संचेती से हुई। सरिता को सोसायटी का सहारा मिला पर संघर्ष जारी है। मुकुंद अब भी उसे परेशान कर रहा है। अब सरिता बस इतना चाहती है कि मुकुंद उसे व बच्चे को परेशान न करें।

कंट्रेट : **श्रवण राठौड़ | रमिंद्रसिंह | प्रीति शर्मा | लक्ष्मी कुमार**
–भास्कर रिसर्च टीम

कन्याभ्रूण हत्या या यौन आधारित गर्भपात मुद्दा

अंजलि सिन्हा

छ दिनों पहले मुंबई से खबर आई है कि वहां की एक अदालत ने गर्भावस्था में लिंग परीक्षण करने तथा लड़के का जन्म सुनिश्चित करने के लिए विशेष इलाज करने का दावा करने वाली दो महिला डॉक्टरों पर कार्रवाई करते हुए उन्हें तीन-तीन साल के लिए जेल भेज दिया है। गर्भ का लिंग जांच करना सन् 2003 में ही अपराध माना गया तथा इसके खिलाफ कानून बना जिसे 2008 में संशोधित कर और सख्त बनाया गया। किंतु इस कानून के तहत अपराध करने वालों के खिलाफ कार्रवाई नहीं के बराबर ही रही है। इसको प्रभावी बनाने का संकल्प प्रशासन ले तो शायद असर भी दिखे।

इधर, दिल्ली में असर दिखा और लड़कियों की संख्या 1,000 लड़कों पर 1004 की हुई। दिल्ली में इस मसले पर पैदा की गई जागरूकता के साथ-साथ कार्रवाई का भय और माहौल भी पैदा किया गया। उधर पंजाब के नवाशहर में पहुंचे एक जिलाधिकारी ने भी इसी किस्म का कमाल दिखाया और लड़की-लड़का के विषम लिंगानुपात को बेहतर बनाया। लेकिन दिल्ली, नवांशहर जैसे स्थान अपवाद दिखते है। देशभर में कन्याभ्रूण को गर्भ में खतम करने का काम बड़े पैमाने पर हो रहा है तथा हमारे समाज में यह एक गंभीर समस्या का रूप ले चुका है। जो दंपति सुविधाओं के अभाव या कानून के भय से गर्भ में कन्या भ्रूण का गर्भपात नहीं करा पाते हैं वे भी इच्छा रखते हैं कि संभव होता तो बेटी नहीं, बेटा ही पैदा करते। यह इस बात का सबूत है कि हमारे समाज में हिंसा तथा गैरबराबरी कितनी गहरे जड़ जमाए है तथा परत-दर-परत उसका अस्तित्व मौजूद है जिसका उदाहरण अन्य समस्याओं में भी देखा जा सकता है जैसे कि दहेज हत्याएं, यौन हिंसा, संपत्ति से बेदखली आदि।

इस समस्या का विश्लेषण करते समय हमें इसके कुछ दूसरे पक्षों पर भी ध्यान देना चाहिए ताकि समग्रता में इसको समझा और संबोधित किया जा सके। यदि हम इस मुद्दे के प्रचलित शब्द पर ध्यान दें तो वह पाप-पुण्य की झलक दिखाता है यानी भ्रूण हत्या (फीमेल फोटीसाइड) या कन्याभ्रूण हत्या एक प्रचलित शब्द है। इसके बावजूद शब्दों के निहितार्थ को जानना ही चाहिए। इस शब्द का प्रयोग अपराध करने वालों को नैतिक-अनैतिक के दायरे में रखता है यानी हत्या करना बुरी बात है जैसे कि दहेज लेना बुरी बात है। हत्या निश्चित ही बहुत बुरा है लेकिन वह एक बड़ा अपराध है और साथ ही जन्म लेने वाले के हक का सवाल है कि वह इसलिए सिर्फ पैदा नहीं हो सकती क्योंकि वह लड़की है।

कन्याभ्रूण हत्या की बात करने में गर्भपात का अधिकार औरत से छिन जाता है। एक तरफ जहां लड़की होने के नाते गर्भपात नहीं कराना चाहिए, वहीं यह विचारणीय है कि गर्भपात कराना औरत का हक भी है। बच्चा पैदा करने की योजना न हो, या जिम्मेदारी उठाने की स्थिति न हो तो गर्भपात का हक होना जरूरी है। यह भी समझना जरूरी है कि गर्भ का ठहरना कई बार एक्सीडेंटल या आकस्मिक ढंग से भी होता है। हमारे जैसे समाज में शादीशुदा औरत के साथ कई बार सहमति के बिना भी पति संबंध बनाता है या कंडोम/गर्भनिरोधकों के असफल होने की घटनाएं भी काफी होती है। ऐसी स्थिति में अनचाहे गर्भ को खतम नहीं करने का अर्थ है औरत का हक खतम करना या बिना योजना के ऐसे बच्चे पैदा कर लेना। इसलिए कन्याभ्रूण हत्या के बजाय यौन आधारित गर्भपात कहा जाना चाहिए।

गर्भपात का अधिकार नहीं होना, परिवार नियोजन के अधिकार को भी बाधित करता है। मान लें कि दूसरा गर्भ अनचाहा है और इत्तफाकन वह भी कन्या का है तो स्त्री-पुरुष को यह हक होगा कि नहीं कि वह गर्भपात कराए ? निश्चित ही इसके दुरुपयोग की संभावना भी होंगी। इसलिए समाज में लिंग आधारित भेद क्यों है, इसी के मूल कारणों पर ध्यान देना चाहिए कि आखिर लोग बेटी क्यों नहीं चाहते; बेटा ही क्यों पैदा करना चाहते हैं ? ऐसा सिर्फ अंधविश्वास में या बेटे को श्रेष्ठ मान लेने के कारण लोग नहीं करते बल्कि बेटा उन्हें बुढ़ापे का सहारा भी लगता है तथा बेटी के दूसरे घर चले जाने की बात भी है। दहेज जैसी समस्या तथा बेटी के साथ इज्जत की बात जुड़ी होना जिसके खराब हो जाने का खतरा भी सताता रहता है।

क्या हमारा समाज पूरी पारिवारिक सामाजिक संरचना को ठीक करने के लिए तैयार है? मसलन यदि बेटी और बेटा को संपत्ति में व्यवहारत: भागीदार बनाया जाए ताकि बेटी के भी मायके में रहने की संभावना बने। या बेटियां कहीं और भी रहें तो वहां उनके माता-पिता वैसे ही जा सकें जैसे की अपने बेटे के घर में जाते है।

अब समय आ गया है कि आप अपनी बेटी या बहन की जिंदगी के लिए समाज में सबसे बदतरीन का सामना करने और यहां तक कि समाज से बहिष्कृत होने के लिए भी तैयार हो जाएं। दहेज से इनकार करें, चाहे वह आपके लिए हो या फिर आपके बच्चे या बहन के लिए। ऐसा करने वाले आप सबसे पहले बनें। याद रखें, समाज आपकी बेटी या बहन को प्रताड़ित होने या मरने से नहीं बचा सकता।

बेटी बड़ी या इज्जत ?

मल्लिका साराभाई

लेखिका प्रख्यात नृत्यांगना व समाजसेविका हैं।

नोबेल पुरस्कार विजेता और जाने-माने अर्थशास्त्री डॉ. अमर्त्य सेन का अनुमान है कि बीते तीन दशकों में दक्षिण एशिया और अफ्रीका से दस करोड़ महिलाएं विलुप्त हो चुकी हैं। कई लोग इस पर माथापच्ची कर सकते हैं कि यह आंकड़ा दस करोड़ होगा या पांच करोड़, लेकिन मुद्दे की बात यह है कि यह खबर काफी भयावह है और ऐसा रुझान मानवता के भविष्य को लेकर हमें आक्रांत करता है।

जलवायु परिवर्तन से मानवता खत्म होगी या नहीं, यह हमें नहीं मालूम, लेकिन यदि महिलाओं को लेकर यही रुझान जारी रहा तो इससे जरूर मानवीय सभ्यता का समूल नाश हो जाएगा। महिलाओं की संख्या जितनी कम होगी, बच्चों की संख्या भी उसी अनुपात में कम होती जाएगी। यहां तक कि उन पुरुष प्रधान मानसिकता वाले लोगों के लिए भी यह बुरी खबर है, जिनके लिए महिलाएं केवल बच्चे पैदा करने वाली मशीन हैं। यदि यह खबर आपके लिए बुरी नहीं भी है, तब भी आपके पोतों के लिए तो है ही।

भविष्य हमारे सामने है। गुजरात के पटेल समाज का एक उदाहरण लिया जा सकता है। गुजरात में इस समाज के लोगों की तादाद अच्छी-खासी है। शायद पटेल समाज ने भविष्य की आपदा को कुछ साल पहले ही महसूस कर लिया था और एक विशाल यज्ञ का आयोजन करवाया था। इस यज्ञ में एकत्र लोगों को कन्या भ्रूण की रक्षा करने की शपथ दिलवाई गई थी (जहां तक मुझे जानकारी है, ऐसा कोई अध्ययन नहीं हुआ है कि शपथ समारोह में जो 12 लाख लोग उपस्थित हुए थे, उनके घरों में पैदा होने वाली लड़कियों की संख्या में कोई इजाफा हुआ अथवा नहीं)। राज्य के कुछ पटेल गांवों में स्थिति यह है कि वहां 20 साल से कम उम्र की एक भी लड़की नहीं मिलेगी। यह तथ्य 20 सालों में महिलाओं के संहार की ओर साफ इशारा करता है। हरियाणा के लोग 'फैमिली वाइफ' खरीदने के लिए केरल जाते हैं और उन बदकिस्मत महिलाओं के साथ लौटते हैं, जो न तो किसी को समझ सकती हैं और न ही किसी से बातें कर सकती हैं। इन महिलाओं का इस्तेमाल सेक्स और घरेलू कार्यों के लिए किया जाता है। 'फैमिली वाइफ' से मतलब है कि उसका उपभोग परिवार के सभी पुरुष सदस्य करते हैं।

हरियाणा के लोग 'फैमिली वाइफ' खरीदने के लिए केरल जाते हैं और उन बदकिस्मत महिलाओं के साथ लौटते हैं, जो न तो किसी को समझ सकती हैं और न ही किसी से बातें कर सकती हैं।

तथाकथित सभ्य समाज से आने वाले लोग जो अपनी बेटियों के लिए भव्य शादियों और भारी-भरकम दहेज की योजना बनाते हैं, क्या वे ऐसी स्थिति का अनुमान लगा सकते हैं? किलो में सोना व सैकड़ों साड़ियां खरीदने की हायतौबा मचाने और दूल्हे के लिए नया घर तलाशने की कवायद में क्या हम नदारद होती बेटियों और स्वयं अपने कार्यों के बीच प्रत्यक्ष और संभवत: एकमात्र प्रासंगिक संबंध नहीं देखते हैं?

कन्या भ्रूण हत्या रोकने के लिए सरकार ने कई कदम उठाए हैं, लेकिन इनमें से अधिकांश बेमानी साबित हुए हैं और उलटे उनसे भ्रष्टाचार व अपराध में बढ़ोतरी ही हुई है। हममें से कई लोग ऐसे डॉक्टरों के बारे में जानते हैं, जो लिंग के परीक्षण पर प्रतिबंध की वजह से कानूनी कार्रवाई से बचने के लिए खुले में तो कुछ नहीं कहते, लेकिन सांकेतिक रूप में सब कुछ साफ कर देते हैं। लड़की होने पर वे 'जय माता दी' कहकर और लड़का होने पर 'जय रामजी की' कहकर बधाई देते हैं। कुछ लालची किस्म के व्यापारियों ने तो रिक्शों पर ही परीक्षण प्रयोगशालाएं बना ली हैं, जो झुग्गी बस्तियों व गांवों में फेरे लगाते हैं और लोगों के दरवाजों पर ही बच्चे के लिंग के बारे में जानकारी देते हैं।

लेकिन यह पूरी कहानी का केवल एक पहलू है। आखिर हम दहेज से होने वाली मौतों पर चुप्पी क्यों साध लेते हैं? लाखों लड़कियों को दहेज की वजह से इतना सताया जाता है कि वे अंततः परेशान होकर खुदकुशी का रास्ता अख्तियार कर लेती हैं। या फिर उन्हें सता-सताकर मार दिया जाता है। क्या दहेज किसी लड़की की सलामती की गारंटी देता है? या फिर हम दहेज के साथ लड़की को विदा करके स्वयं को यह कहकर तमाम चिंताओं से मुक्त कर लेते हैं कि हमने तो अपने परिवार के प्रति अपने दायित्व का निर्वहन कर लिया?

यहां सवाल यह है कि कभी जिस मुद्दे पर काफी खुलकर चर्चा की जाती थी, क्या आज वह इतना सामान्य हो गया है कि हम दिए जा रहे दहेज के बारे में दबे हुए स्वर में भी बातचीत नहीं करते हैं? जब एक अपराध बहुत सामान्य हो जाता है, यहां तक कि प्रशंसनीय भी, तो वह परंपरा में शामिल हो जाता है।

मैं जानती हूं कि दहेज के मुद्दे पर हममें से ही कई लोग कहेंगे, 'हां, यह ठीक है कि दहेज अच्छी बात नहीं है, लेकिन इसका विकल्प क्या है? आखिर कोई कब तक लड़कियों को घर पर बिठाकर रखेगा?' स्वयं से यह सवाल पूछिए, 'भारत में जो स्थिति है, उसके मद्देनजर इस बात की संभावना 50 फीसदी है कि आपकी बेटी या बहन को दहेज के लिए प्रताड़ित किया जाएगा। क्या आप वाकई में ऐसा चाहेंगे कि आपकी बेटी या बहन इस तरह से प्रताड़ित हो?' तब मुझे आपकी ओर से यह सुनने को मिलेगा, 'पर समाज क्या कहेगा?' फिर से अपने आप से पूछिए कि समाज आपको क्या कहेगा? क्या आप एक घटिया अभिभावक हैं? कि यह तो हमारे समाज की स्थापित परंपरा है? कि क्या कुटुंब की प्रतिष्ठा धूल में नहीं मिल जाएगी? कि पड़ोसी ने तो अपनी बेटी के विवाह में 50 लाख का दहेज दिया और यदि आप कम देंगे तो क्या इससे आपकी नाक नीची नहीं हो जाएगी? कि क्या यही वह तरीका नहीं है जिससे आप अपनी बेटी या बहन के प्रति प्यार जता सकते हैं और उसे यह आभास करवा सकते हैं कि आपको उसकी कितनी चिंता है?

समाज को ऐसा कहने दें। स्वयं से फिर पूछें कि आपके लिए क्या ज्यादा मायने रखता है? आपकी बेटी की जिंदगी या आपकी नाक?

क्या कभी आप आग में झुलसे हैं? और ऐसा होने पर चीखे भी होंगे? तब कल्पना कीजिए अपनी बेटी के बारे में कि उस पर कोई केरोसिन उंडेल रहा है या फिर स्टोव फट पडा है। उसे होने वाले असहनीय दर्द की कल्पना कीजिए और यह भी कि इसके लिए आप जिम्मेदार हैं।

अब समय आ गया है कि आप अपनी बेटी या बहन की जिंदगी के लिए समाज में सबसे बदतरीन का सामना करने और यहां तक कि समाज से बहिष्कृत होने के लिए भी तैयार हो जाएं। दहेज से इनकार करें, चाहे वह आपके लिए हो या फिर आपके बच्चे या बहन के लिए। ऐसा करने वाले आप सर्वप्रथम बनें। याद रखें समाज आपकी बेटी या बहन को प्रताड़ित होने या मरने से नहीं बचा सकता। यह काम आज ही करें, कल तो फिर बहुत देर हो जाएगी।

बेटियों को बचाने के लिए

मेधा

लेखिका स्वतंत्र पत्रकार हैं।

कुछ दिनों पूर्व ही दादर (मुंबई) की एक अदालत ने दो डॉक्टरों को प्रसवपूर्व लिंग जांच का दोषी पाया है और उन्हें तीन साल की सजा सुनाई है। इस जांच का सीधा संबंध कन्या भ्रूण हत्या से है। इसकी रोकथाम के लिए पीसीपीएनडीटी 2002 कानून को 14 फरवरी,2003 को देश भर में लागू किया गया था।

विडंबना यह है कि दोषी पाई गई दोनों ही डॉक्टर महिला हैं। औरंगाबाद की होमियोपैथ डॉक्टर छाया, डॉ. शुभांगी अडकर के दादर स्थित नर्सिंग होम में महीने के दो रविवार बैठा करती थी। दोनों डॉक्टरों ने एक पत्रिका में विज्ञापन दिया था। विज्ञापन का शीर्षक था 'क्या आप बेटा चाहते हैं'। इस विज्ञापन में छाया ने अपने को विदेश प्रशिक्षित डॉक्टर बताया और दावा किया कि वह एक खास विधि से उपचार करने की विशेषज्ञ है। इस विधि से उपचार कराने पर शर्तिया बेटा पैदा होता है। इस विवादास्पद विज्ञापन के प्रकाशन के बाद बृहन्नमुंबई नगर निगम ने जांच की और नवंबर 2004 में मामला दर्ज किया था। कन्या भ्रूण हत्या में डॉक्टरों के संलिप्त होने की यह पहली खबर नहीं है। हर छमाही में ऐसी खबरें आ ही जाया करती हैं। 2007 में गुड़गांव के एक क्लीनिक में 35 कन्या भ्रूण के साथ एक डॉक्टर को गिरफ्तार किया गया था। 2006 में पंजाब के संगरूर शहर के पास एक गड्ढे में सौ कन्या भ्रूण मिले थे। गुड़गांव और संगरूर नवदौलतिया ठिकाने हैं। और इन ठिकानों पर जिस अनुपात में दौलत बरस रही है, उसी अनुपात में स्त्रियों के खिलाफ काम करने वाली परंपरागत सोच के लिए तकनीक के नए औजार जगह पा रहे हैं। नए तर्ज के विकास की एक बानगी यह भी है कि अपेक्षाकृत समृद्ध राज्यों- पंजाब और हरियाणा में लिंग अनुपात सबसे कम है। पंजाब में प्रति हजार लड़कों पर लगभग 800 लड़कियां हैं।

कन्या भ्रूण हत्या को रोकने के लिए बना कानून स्वयं इतना पंगु है कि भय भावना जगाना तो दूर कायदे से अभी लोगों के मानस पर भी अंकित नहीं हो पाया है।

जाहिर है, बेटियों के जन्म को प्रोत्साहन देने वाली लाडली और अन्य कई सरकारी योजनाएं अपना विशेष असर नहीं छोड़ पा रही। इन योजनाओं के केंद्र में गरीब हैं और ऊपर की घटनाएं कह रही हैं कि कन्या भ्रूण हत्या के मामले में अमीर गरीबों से कहीं आगे हैं। दूसरे, कन्या भ्रूण हत्या को रोकने के लिए बना कानून स्वयं इतना पंगु है कि भय भावना जगाना तो दूर कायदे से अभी लोगों के मानस पर भी अंकित नहीं हो पाया है।

एक आंकड़े के मुताबिक प्रति दस लाख कन्या भ्रूण हत्या पर पांच सौ करोड़ का व्यवसाय होता है। आर्थिक समृद्धि के बाद लोग महिलाओं को उनके पारंपरिक श्रम वाली भूमिका से मुक्त कर घर तक सीमित कर दे रहे हैं। वहां पितृसत्ता का शिकंजा और अधिक कस जाता है और वह अपनी जान की खैर के लिए अपनी अजन्मी, जन्मी हत्या को चुपचाप स्वीकार कर रही हैं। दरअसल बढ़ी हुई आर्थिक और सामाजिक हैसियत दबे-छुपे सामंती संस्कारों को उभारने का काम कर रही हैं। इसमें संचार माध्यमों की भी बहुत अधिक भूमिका रही है। खासतौर से टीवी धारावाहिकों ने स्त्री छवि को बहुत नुकसान पहुंचाया है।

नया मध्यवर्ग बेटी के नाम पर किए गए किसी खर्च को घाटे का सौदा मानता है। शादी के लिए लड़की का पढ़ा-लिखा होना जरूरी समझा जाने लगा है। लेकिन इस पढ़ाई-लिखाई से दहेज से मुक्ति का रास्ता नहीं निकल पाया। ऐसे में लड़कियों की पढ़ाई और शादी में दोहरा खर्चा आता है। ऐसे में मां-बाप 'मेरे घर बिटिया न जन्में' की प्रार्थना करते हैं। यह प्रार्थना कबूल नहीं होती तो चमत्कारी बाबाओं से लेकर अत्याधुनिक तकनीक तक का सहारा लिया जाता है ताकि बेटी को जन्म लेने से पहले ही मार दिया जाए। एक कानून यहां फिर सहायता करने के लिए मौजूद होता है। आखिर गर्भपात का अधिकार स्त्री को यह छूट तो देता ही है कि वह अनचाहे गर्भ से छुटकारा पा ले।

कानून सफल तब होते हैं, जब समाज उनको अपनी आदतों में शुमार कर लेता है। भ्रूण हत्या के कानून के साथ ऐसा नहीं हो सका। सामाजिक चलन अगर सदियों से किसी खास तबके को लाभकर स्थिति में रखने वाला हुआ तो जनभावना ऐसी बनती है कि चलन स्वाभाविक लगने लगता है। ऐसे में जनभावना अपने को गलत ठहराने वाले कानून की काट निकाल लिया करती है। कन्या भ्रूण हत्या को रोकने वाले कानून के साथ भी यही हो रहा है।

सामाजिक कुरीतियों से केवल कानून के जरिए नहीं निपटा जा सकता। जन्मी, अजन्मी बेटियों की हत्या करने वालों का सामाजिक बहिष्कार, बेटियों की सकारात्मक भूमिका का प्रचार, स्त्री सुरक्षा, दहेज प्रथा का विरोध, अंतरजातीय विवाह आदि के प्रचलन बढ़ने पर ही जन्मी, अजन्मी बेटियों को बचाया जा सकेगा। इसमें संचार माध्यमों की महती भूमिका हो सकती है।

medhaonline@gmail.com

दम तोड़ती लड़कियां और मुस्कुराते अपराधी

शीला लेखिका पत्रकार हैं।

हमारे समाज में छेड़खानी जैसे मामलों को बदनामी से जोड़ कर देखा जाता है, जिसके चलते न तो अपराध करने वाले के खिलाफ कोई शिकायत दर्ज हो पाती है और न ही उसे दंड मिलता है।

हरियाणा पुलिस के अधिकारी एसपीएस राठौर छेड़छाड़ के मामले में सजा मिलने के बाद जब आधे घंटे के भीतर अपनी जमानत करवा कर बाहर आए और छाती ठोक कर उच्च अदालत में जाने की बात कही, तो उनके चेहरे की मुस्कुराहट सबसे बड़े लोकतंत्र पर एक खतरनाक टिप्पणी थी। शायद राठौर इस बात को भूल गए थे कि यह मामला सिर्फ छेड़छाड़ तक सीमित नहीं था। हरियाणा टेनिस एसोसिएशन के अध्यक्ष पद पर रहते हुए एक नई उभरती हुई टेनिस खिलाड़ी रुचिका गिरहोत्रा से 12 अगस्त,1990 को राठौर ने छेड़छाड़ की थी। एसपीएस राठौर का विरोध करने के दो हफ्तों के भीतर ही रुचिका पर अनुशासनहीनता का आरोप लगाकर उसे स्कूल से निकाल दिया गया। घटना के तीन साल बाद रुचिका ने आत्महत्या करं ली। इस तरह देखें तो मानसिक यातना से जूझते हुए रुचिका का खुदकुशी करना ही राठौर पर बुनियादी आरोप बनता है। किसी की हत्या करना या उसे आत्महत्या की स्थिति में ला देना, दोनों ही स्थितियों में जान एक ही व्यक्ति की जाती है।

इन तीन सालों में रुचिका के भाई पर दर्जनों झूठे मुकदमे दर्ज हुए और परिवार को मामला रफा-दफा करने के लिए कितनी ही धमकियां मिलीं। अपने परिवार की इस हालत के लिए शायद खुद को जिम्मेदार मानकर ही रुचिका ने आत्महत्या जैसा कदम उठाया होगा। छेड़छाड़ की घटना की मुख्य गवाह रही आराधना के माता-पिता को एसपीएस राठौर को सजा दिलाने के लिए 19 साल का लंबा इंतजार करना पड़ा। नतीजा यह निकला कि राठौर को सिर्फ छह महीने की सजा हुई है और एक हजार रुपए का जुर्माना। फिलहाल वह खुली हवा में सांस ले रहे हैं।

पैसे और पहुंच के बल पर अपराधी इस देश में आम आदमी के लिए न्याय को प्रभावित करते रहे हैं। रुचिका गिरहोत्रा का मामला भी ऐसे ही मामलों में एक कड़ी है। यह विलंबित न्याय का एक क्लासिकल उदाहरण है। इसका फैसला रुचिका के रहते हुए हो गया होता, तो शायद रुचिका आज जिंदा होतीं। आखिर दोषी कौन है?

हमारे समाज में छेड़खानी जैसे मामलों को बदनामी से जोड़ कर देखा जाता है, जिसके चलते न तो अपराध करने वाले के खिलाफ कोई शिकायत दर्ज हो पाती है और न ही उसे दंड मिलता है। रुचिका का मामला उन लोगों के लिए एक सबक है, जो इसे बदनामी से जोड़ कर देखते हैं और इस तरह के मामलों में अपने ही सिक्के में खोट होने की बात सोचते हैं।

हाल ही में खबर आई है कि केंद्र सरकार बड़े व्यापारिक घरानों से जुड़े मामलों को निपटाने के लिए एक फास्ट ट्रैक कोर्ट की परिकल्पना पर विचार कर रही है। यह दिखाता है कि सरकार को न्याय के लिए सिर्फ पैसे वालों का ख्याल है, रुचिका जैसे संवेदनशील मामलों से उसे कोई मतलब नहीं होता। 36 साल पहले अरुणा शानबाग नाम की एक नर्स से हुए बलात्कार के बाद से ही वह कोमा में है। इसके अलावा तमाम ऐसी किशोरियां और महिलाएं हैं, जो पूरी जिंदगी अपने खिलाफ हुई किसी घिनौनी हरकत के साये में बिता देती हैं और उनके करीबियों तक को भी खबर नहीं लग पाती। आधी दुनिया को कुंठित करने वालों के खिलाफ महज छह महीने की सजा और वो भी तत्काल जमानत का प्रावधान न्याय की किस परिभाषा से आता है? आराधना के माता-पिता का संघर्ष अभी खत्म नहीं हुआ है, क्योंकि राठौर अब भी जेल के बाहर है। उनका संघर्ष तभी खत्म होगा, जब राठौर को उच्च न्यायालय भी सजा सुनाए।

sheela.abhi@gmail.com

नहीं रुक रहा बाल यौन उत्पीड़न

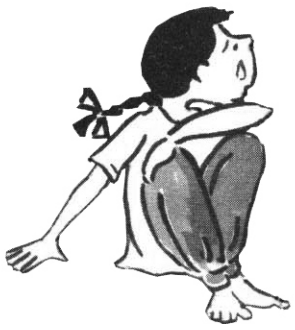

मुद्दा

स्पर्धा

बाल उत्पीड़न के मामले तेजी से बढ़ रहे हैं, पर राष्ट्रीय बाल आयोग ने खासतौर से इस मुद्दे पर कई तरह के कार्यक्रम शुरू किए हैं, लेकिन अब भी सबसे चिंताजनक स्थिति यही है कि बच्चे उस माहौल में ही सबसे ज्यादा उत्पीड़न के शिकार हो रहे हैं, जो उनके परिवार या आसपास होते हैं। समस्या कितनी बड़ी है, यह सिर्फ एक उदाहरण से साफ है- बड़े फिल्म निर्देशक अनुराग कश्यप ने माना कि वह साल-दो साल नहीं, बल्कि लगातार ग्यारह बरसों तक इस तरह के उत्पीड़न के शिकार रहे हैं। कश्यप की जिंदगी पर इसका असर यह पड़ा कि आज भी मानते हैं कि वह अपनी जिंदगी के कड़वे अनुभव से अब तक नहीं उबर पाए हैं। लिहाजा, जब ओनिर की फिल्म 'माई नेम इज अभिमन्यु' में उन्हें बाल उत्पीड़क का किरदार निभाने का मौका मिला, तो वह सहर्ष तैयार हो गए। कश्यप कहते हैं कि लगातार ग्यारह साल तक उनके **साथ हुआ यह शोषण उन्हें इस किरदार को अच्छे से निभाने में** मददगार होगा। कश्यप के मुताबिक, इस फिल्म से बाल उत्पीड़न की ओर लोगों का ध्यान जाएगा और वह इस मामले को ज्यादा व्यापक फलक तक पहुंचाने में कामयाब हो सकेंगे। गौरतलब यह है कि केवल इस तरह की एक-दो कोशिश ही काफी नहीं होती, जरूरत समाज और परिवार की जड़ों तक पहुंचने की है।

कश्यप के साथ बचपन में ऐसा केवल परिवार या पड़ोसियों द्वारा ही नहीं हुआ, बल्कि स्कूल में भी उनके साथ शोषण जारी रहा। महिला एवं बाल विकास मंत्रालय के आंकड़े बताते हैं कि करीब 54 फीसद बच्चे अपने साथ हो रहे इस शोषण के बारे में अपना मुंह नहीं खोल पाते। इनमें से अधिकतर को तो समझ नहीं आता कि उनके साथ क्या घट रहा है। कुछ बताते तो हैं लेकिन

परिवार के लोग उनकी आवाज को दबाने की कोशिश करते हैं। नन्हे बच्चों के साथ हो रहा यौन शोषण इस कदर बढ़ा है कि 5 से 12 साल की उम्र के बीच के करीब 42 फीसद बच्चों को जबरन चूमा जाता है, तो करीब 26 फीसद किशोरों को जबरन उनके गुप्तांग दिखाने को मजबूर किया जाता है। 5 से 12 की उम्र के 42 फीसद और 13 से 14 की उम्र के 26 फीसद किशोरों का उत्पीड़न शादी-ब्याह और अन्य पारिवारिक आयोजनों के समय होता है, यानी दूर के रिश्तेदारों द्वारा बाल मन पर गहरे आघात किए जाते हैं, जो उनके बड़े होने पर भी मन-मस्तिष्क से नहीं निकल पाते। फिल्म 'मानसून वेडिंग' में अभिनेत्री शेफाली शाह के किरदार ने अपने चाचा द्वारा बाल शोषण का खुलकर जिक्र किया है। अध्ययन बताते हैं कि विश्वास और भरोसे के रिश्ते वाले 50 प्रतिशत लोग इस तरह के कृत्यों में संलिप्त होते हैं।

ऐसा नहीं है कि बाल उत्पीड़न केवल रिश्तेदारों या जान-पहचान के लोगों द्वारा ही किया जाता है। इस संदर्भ में हुए राष्ट्रीय अध्ययन बताते हैं कि अपने ही भाई-बहनों द्वारा करीब 89 फीसद बच्चे शारीरिक उत्पीड़न झेलते हैं। इस संदर्भ में यहां यह भी जानना आवश्यक है कि भाई-बहन के अलावा पिता भी इस तरह के कृत्य के भागीदार होते हैं। राहुल बोस की फिल्म 'एवरीबडी सेज आई एम फाइन' ऐसी लड़की की कहानी है, जिसका पिता ही उसका दैहिक शोषण करता रहा है। बाल शोषण परिवार की दहलीज से निकलकर स्कूलों तक भी जा पहुंचा है। आए दिन इस तरह की खबरें मीडिया में आती रहती हैं। जाहिर-सी बात है कि स्कूल और प्रशासन की मॉनिटरिंग में ही कहीं कमी है, जबकि बच्चों का काफी समय स्कूल में ही गुजरता है। गोवा जैसे कुछ शहरों में तो यह उद्योग का रूप ले रहा है, जहां समाज सेवा के नाम पर बच्चों के साथ दुष्कर्म किया जाता है। यदि आप इस खतरनाक कृत्य को देखना चाहते हैं तो मधुर भंडारकर की फिल्म 'पेज थ्री' के उस दृश्य को याद कीजिए, जहां समाज-सेवा के नाम पर चल रहे अनाथालयों में रह रहे बच्चों को विदेशियों के पास जबरन भेजा जाता है। चौंकाने वाले आंकड़ों के बावजूद आश्चर्यजनक तो यह है कि हममें से कम लोग ही इस मुद्दे पर बात करते हैं। इसे दोगलापन कहिए, या जागरूकता में कमी कि समाज में हो रही इन अशोभनीय और घृणित घटनाओं के बावजूद हम इस पर चुप्पी साधे हुए हैं। समाधान ढूंढना तो दूर की कौड़ी है। दरअसल, इसमें अहम भूमिका परिवार और उन लोगों की होनी चाहिए, जिनके लगातार संपर्क में बच्चे होते हैं।

नाबालिग से रेप के मामले खुली अदालत में न सुने जाएं

नई दिल्ली (एसएनबी)। नाबालिग से बलात्कार के मामलों की सुनवाई खुली अदालत में किए जाने पर कड़ी प्रतिक्रिया जताते हुए दिल्ली उच्च न्यायालय ने कहा है कि उनके मामलों की सुनवाई के लिए उनके अभिभावकों के संरक्षण में एक दोस्ताना माहौल बनाया जाना चाहिए।

उच्च न्यायालय ने अपने ही पूर्व के एक फैसले के दिशा-निर्देशों का हवाला देते हुए कहा कि बलात्कार की शिकार बच्चियों को उनके अभिभावकों, संरक्षकों से इस आधार पर अलग नहीं किया जा सकता कि उनका स्वेच्छा से बयान सुनिश्चित किया जा सके। न्यायमूर्ति गीता मित्तल ने इस बात पर अफसोस जाहिर किया कि सुनवाई अदालतें नाबालिगों से बलात्कार के मामलों की सुनवाई के दौरान इन दिशा-निर्देशों की अवहेलना कर रही हैं। उन्होंने कहा, 'अदालतों को वयस्कों के लिए बनाई गई संस्था में बच्चों को हिरासत में नहीं रखना चाहिए।' उच्च न्यायालय ने यह व्यवस्था बलात्कार के एक आरोपित को दोषी ठहराए जाने और उसे सात साल की सजा सुनाए जाने संबंधी फैसले को निरस्त करते हुए दी।

- **दिल्ली हाईकोर्ट सख्त, कहा-सुनवाई कोर्ट नहीं मान रहे हैं दिशा-निर्देश**
- **अभिभावकों की मौजूदगी में दोस्ताना माहौल में हो अदालती कार्रवाई**

न्यायमूर्ति मित्तल ने कहा कि अपराध के स्थान को लेकर पीड़ित के बयान में विरोधाभास है। ऐसा न्यायाधीश की ओर से, सुनवाई के दौरान असावधानीवश हुआ है। उच्च न्यायालय के दिशा-निर्देशों का संदर्भ देते हुए फैसले में कहा गया कि पीड़ित का बयान पूर्व में मजिस्ट्रेट द्वारा रिकार्ड किया जाना था और सुनवाई के दौरान स्थगन से बचना चाहिए था। उच्च न्यायालय ने कहा, 'उच्चतम न्यायालय और उच्च न्यायालयों के बार-बार कहने के बाद भी यह पाया गया है कि सुनवाई अदालतें इनका पालन करने में नाकाम रही हैं।'

नाबालिग से बलात्कार के मामले में उच्च न्यायालय ने पुलिस को, अदालत के पूर्व में दिए गए इस निर्देश का पालन करने के लिए भी कहा कि यह सुनिश्चित किया जाना चाहिए कि पीड़ित के बयान की वीडियो रिकॉर्डिंग हो। उच्च न्यायालय ने पुलिस को नाबालिग से बलात्कार के मामले में तत्काल प्राथमिकी दर्ज करने और पीड़ित का बयान लेने के लिए एक महिला अधिकारी नियुक्त करने के लिए भी कहा। न्यायमूर्ति मित्तल ने कहा कि पीड़ित का बयान यथासंभव शीघ्र दर्ज किया जाना चाहिए और बयान लेने वाली अधिकारी पुलिस की वर्दी में नहीं, बल्कि सादे कपड़ों में हो।

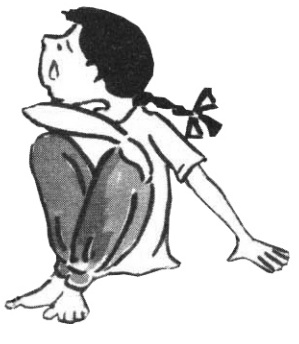

अकेली स्त्री का हक

मुद्दा

अलका आर्य

करवा चौथ पर पति की मंगल कामना के लिए व्रत रखने वाली विवाहिताएं सोलह सिंगार करने में व्यस्त थीं तो दूसरी तरफ दिल्ली में पंद्रह राज्यों से आई विधवाएं, तलाकशुदा औरतें और कुंआरी मांओं ने एकल नारी की समस्याओं को उठाने के लिए 'राष्ट्रीय एकल नारी अधिकार मंच' के गठन की घोषणा की। जिस समाज में औरत की पहचान और इज्जत उसके वैवाहिक दर्जे से तय होती है, वहां करवा चौथ को एकल महिलाओं के लिए संघर्ष छेड़ने के आह्वान का एक प्रतीकात्मक अर्थ भी है। इनका सपना ऐसे समाज की स्थापना करना है, जहां सभी एकल महिलाओं को सामाजिक, आर्थिक, राजनीतिक और संवैधानिक अधिकार मिले और वे समाज में इज्जत के साथ जी सकें।

सरकारी आंकड़ों के मुताबिक, देश में करीब तीन करोड़ चवालीस लाख विधवाएं, करीब साढ़े तेईस लाख परित्यक्ताएं- तलाकशुदा महिलाएं हैं। यानी 3.6 करोड़ से ज्यादा महिलाएं अकेली हैं।

इस तारीख का चयन इत्तफाक भी हो सकता है। सरकारी आंकड़ों के मुताबिक, देश में करीब तीन करोड़ चवालीस लाख विधवाएं और करीब साढ़े तेईस लाख परित्यक्ताएं, तलाकशुदा महिलाएं हैं। यानी 3.6 करोड़ से ज्यादा महिलाएं अकेली हैं। यह सरकारी संख्या है, जबकि सच्चाई यह है कि एकल महिलाओं की संख्या इससे कहीं ज्यादा है। कौन सी महिला 'एकल' है, इसे लेकर सरकारी और गैरसरकारी संगठनों के बीच मतभेद है।

सरकार की नजर में विधवा, तलाकशुदा, परित्यक्ता एकल महिला है। लेकिन दूसरे संगठनों की राय में विधवा, तलाकशुदा, परित्यक्ता , पैंतीस साल से ज्यादा उमर की बिनब्याही महिला, कुंआरी मां एकल हैं। इसके अलावा जिनके पति लापता हैं या आजीवन कारावास काट रहे हैं अथवा किसी गंभीर शारीरिक, मानसिक रोग से पीड़ित हैं, वे महिलाएं भी एकल हैं। एकल महिलाओं की परिभाषा के इस व्यापक दायरे की तरह अपने पुरुष प्रधान समाज में उनकी समस्याओं की सूची भी बहुत बड़ी है। दरअसल समाज और सरकार दोनों ही एकल महिलाओं की समस्याओं को पूरी तरह से समझने और समाधान निकालने में गंभीर नजर नहीं आते। आज भी समाज एकल महिला की अवधारणा को सम्मानजनक नजरिए से नहीं देखता। एक औरत चाहे वह कुंआरी हो, विधवा या तलाकशुदा, उसके लिए ताउम्र मायके में रहना आसान नहीं। बिना पति की औरत को न ससुराल सम्मान देता है और न ही मायका। ऐसे में गरीब एकल महिलाओं के सामने रोजी-रोटी, परिवार को चलाने, बच्चों को पढ़ाने और मकान की मुख्य समस्या होती है। सामाजिक रूढ़िवादी परंपराओं का जोर उन्हें हाशिए पर रखने पर ज्यादा होता है। कहीं-कहीं एकल महिला को डायन घोषित कर उसे बहुत प्रताड़ित किया जाता है और हत्या भी कर दी जाती है।

हालांकि अपने देश में विधवाओं को अपने पति की जायदाद में कानूनी हक हासिल है लेकिन हकीकत किसी से छिपी नहीं है। एक तरफ विधवा के मन में पति की मौत के बाद जन्मी असुरक्षा की भावना उसे यह कदम उठाने से रोकती है तो दूसरी तरफ पंजीयन की प्रक्रिया भी उतनी आसान नहीं है। परित्यक्ता, तलाकशुदा, लापता पतियों की पत्नियों के लिए भी घर चलाना आसान नहीं है।

ध्यान देने वाली बात यह है कि महिलाओं द्वारा संचालित किए जाने वाले घरों की संख्या बढ़ रही है। इसकी प्रमुख वजह तलाक, पलायन, तनाव है। विधवाओं में से लगभग अस्सी फीसद अपनी देखभाल खुद करती हैं। बहुत कम ऐसी महिलाएं हैं जो अकेली रहते हुए दूसरे घरों से गुजारा या भोजन नियमित रूप से पाती हैं। अक्सर यह भी देखा गया है कि अपने बेटों, बेटियों, मायके या किसी अन्य रिश्तेदार के साथ रहने वाली एकल महिलाएं अगर घर के काम में हाथ न बंटाएं, अपनी पेंशन या मजदूरी न दें तो उन्हें उपेक्षा का सामना करना पड़ता है। ऐसे हालात में ऐसी महिलाओं की मदद के लिए एक दशक पहले 1999 में राजस्थान में 'एकल नारी शक्ति' संगठन का गठन किया गया और आज देश के आठ राज्यों में यह संगठन काम कर रहा है। लेकिन देश भर की एकल महिलाओं की मदद के मद्देनजर राष्ट्रीय एकल नारी अधिकार मंच के गठन की जरूरत महसूस की गई। राज्य स्तरीय संगठन अपने-अपने राज्यों में एकल महिलाओं के अधिकारों के लिए संघर्ष कर रहे हैं। राजस्थान में सामाजिक सुरक्षा पेंशन की रकम 125 से बढ़ाकर 400 रुपए प्रतिमाह कर दी गई है। झारखंड में प्रस्तावित महिला नीति में एकल महिलाओं को अलग श्रेणी में दर्शाया गया है।

हिमाचल प्रदेश के एकल नारी संगठन की संस्थापक अध्यक्षा निर्मल चंदेल कहती हैं 'हिमाचल की सरकारी नीति लापता पतियों की पत्नियों की समस्याओं के प्रति संवेदनशील नहीं है। कई मर्तबा नदी के उस पार काम करने गए मर्द लौट कर नहीं आते। उनकी कोई पुख्ता जानकारी नहीं मिलने के कारण पत्नियों की तकलीफें बढ़ जाती हैं। परिवार को चलाने, बच्चों की देखभाल का पूरा दायित्व अक्सर उन्हें अकेले निभाना होता है। ऐसे में सरकार उन्हें प्राथमिकी दर्ज कराने के सात साल तक पति का इंतजार करने को कहती है। अगर इस सात साल की अवधि के दौरान वह लौट कर नहीं आया तो सरकार उसकी मदद करेगी। हिमाचल एकल नारी संगठन की मांग सात साल की इस शर्त में बदलाव को लेकर है। संगठन सात साल की बजाय एक साल पर जोर दे रहा है ताकि ऐसी जरूरतमंद एकल महिला जल्द से जल्द सरकारी नीति से लाभान्वित को सके। ❐

चुप्पी तोड़ेंगी अकेली रह रहीं महिलाएं

सामाजिक सुरक्षा के लिए केंद्र को मांग पत्र देंगे महिला संगठनों के प्रतिनिधि

झारखंड से आई सरस्वती ने कहा 'हम मिशन के साथ 30 घंटे के सफर के बाद दिल्ली पहुंचे हैं। अब यह जरूरी हो गया है कि अकेली रह रही महिलाओं पर थोपे जा रही सामाजिक कुरीतियों व हिंसक व्यवहार के मसले को सार्वजनिक किया जाए।'

नई दिल्ली, 6 अक्तूबर (जनसत्ता)। अकेले जीवन जीने के लिए अभिशप्त देश की करीब चार करोड़ महिलाओं में से अधिकांश अपनी सामाजिक सुरक्षा को लेकर चिंतित हैं। एकदम अकेले रहने को मजबूर इन महिलाओं ने अपनी चुप्पी तोड़ने का फैसला कर लिया है। विदेशी मूल की भारत में बसीं सामाजिक कार्यकर्त्ता डा. गिन्नी श्रीवास्तव और नारी शक्ति संस्थान की अगुआई में राष्ट्रीय मंच बनाकर 14 राज्यों से करीब डेढ़ सौ महिला संगठनों की प्रतिनिधि सात-आठ अक्तूबर को अपना मांग पत्र केंद्र को देंगी।

दो दिवसीय राष्ट्रीय सम्मेलन की तैयारी के बाबत डा. गिन्नी श्रीवास्तव ने कहा कि अकेली रह रही महिलाओं को सामाजिक रूप से हाशिए पर डाले जाने और भेदभाव संबंधी जिन समस्याओं का सामना करना पड़ता है, उसके बारे में नीति बनाने वालों को जागरूक करने हम यहां आए हैं।

झारखंड से आई सरस्वती ने कहा 'हम मिशन के साथ 30 घंटे के सफर के बाद दिल्ली पहुंचे हैं। अब यह जरूरी हो गया है कि अकली रह रही महिलाओं पर हो रहे अन्यायपूर्ण सामाजिक रीति रिवाजों व हिंसक तौर तरीके उन पर थोपे जाने के मसले को सार्वजनिक किया जाए।'

इंडियन सोशल इंस्टीट्यूट में होने वाले इस दो दिवसीय आयोजन में राजधानी पहुंची पीड़ित महिलाएं आप बीती बताएंगी। जमीन के अधिकार और सरकारी सुविधाओं के लिए किए संघर्ष का ब्योरा पेश करेंगी। इतना ही नहीं दो दिन के इस सम्मेलन में घरेलू हिंसा व सामाजिक हिंसा का चिट्ठा भी खोला जाएगा। इतना ही नहीं, राजस्थान, गुजरात, बिहार, झारखंड, हिमाचल से आई महिलाओं का जत्था नौ अक्तूबर को राष्ट्रपति व प्रधानमंत्री से मुलाकात कर ज्ञापन देगा। इससे पहले ये महिलाएं योजना आयोग की सदस्य डा. सईदा हमीद, राष्ट्रीय महिला आयोग की अध्यक्ष डा. गिरिजा व्यास, यूनिसेफ के कार्यक्रम उपनिदेशक सुषमा कपूर, सामाजिक कार्यकर्ता कमला भसीन, डा. वीना मजूमदार, उषा राय आदि से भी मिलकर अपनी बात रखेंगी और उन्हें संघर्ष व आंदोलन में जोड़ेंगी।

सम्मेलन में हिमाचल से कांता देवी झारखंड से कौशल्या देवी, बिहार की कमला देवी, राजस्थान की जमीला बानो, गुजरात की रेणुका अपनी समस्या बताएंगी।

हाशिए पर

-करीब चार करोड़ अकेली महिलाएं
-आपबीती बताने दिल्ली पहुंचीं
-कुरीतियां थोपे जाने का विरोध
-घरेलू हिंसा का चिट्ठा खोलेंगी

समस्या का एक पहलू यह भी

अलका आर्य

लेखिका स्वतंत्र पत्रकार हैं।

पिछले हफ्ते राजधानी दिल्ली में देश के 15 राज्यों से आईं विधवा, तलाकशुदा, पति द्वारा छोड़ दी गईं महिलाओं व कुंवारी मांओं ने एकल नारी के मुद्दों को उठाने के लिए राष्ट्रीय एकल नारी अधिकार मंच के गठन की घोषणा की। 2001 की जनगणना के अनुसार देश में 7.4 फीसदी महिलाएं एकल हैं। एकल महिला की परिभाषा के दायरे में विधवा, तलाकशुदा व परित्यक्ताएं आती हैं। लिहाजा इस सीमित दायरे के कारण इनकी वास्तविक संख्या सरकारी रिकॉर्ड से कहीं ज्यादा होगी। एकल स्त्री की सरकारी परिभाषा में बिनब्याही औरत का कोई जिक्र नहीं है जबकि एकल नारी अधिकार संगठन के अनुसार 35 साल से ज्यादा उम्र की बिनब्याही औरत भी एकल नारी है। एकल महिलाओं के अधिकारों के लिए संघर्ष करने वाले संगठन का मानना है कि ऐसी महिलाओं की सूची में विधवा, तलाकशुदा, परित्यक्ता, 35 साल से ज्यादा उम्र की बिनब्याही महिला, कुंवारी मां, जिनके पति लापता हैं या आजीवन कारावास में हैं या किसी गंभीर शारीरिक या मानसिक रोग से पीड़ित हैं और एचआईवी, एड्सग्रस्त एकल महिलाएं शामिल हैं। एकल महिलाओं की इस गैरसरकारी परिभाषा के दायरे की तुलना में सरकारी परिभाषा का जो संकुचित दायरा नजर आता है, उसमें औरत की पहचान के प्रति रूढ़िवादी सामाजिक सोच ही हावी है।

दरअसल, एकल महिलाओं के अस्तित्व को स्वीकार न करने के कारण वे आज संसाधनहीन हैं। ऐसी महिलाओं की मदद के लिए एक दशक पहले 1999 में राजस्थान में एकल नारी शक्ति संगठन का गठन किया गया और आज देश के झारखंड, हिमाचल प्रदेश, महाराष्ट्र, मध्यप्रदेश, उत्तर प्रदेश, गुजरात व बिहार में एकल महिलाओं के लिए संगठन काम कर रहे हैं। लेकिन देश भर की एकल महिलाओं की मदद के मद्देनजर राष्ट्रीय एकल नारी अधिकार मंच के गठन की जरूरत महसूस की गई। राज्य स्तरीय संगठन अपने-अपने राज्यों में एकल महिलाओं के अधिकारों के लिए संघर्ष कर रहे हैं। कहीं-कहीं थोड़ी सी सफलता मिली है। मसलन हिमाचल प्रदेश राज्य सरकार ने मदर टेरेसा असहाय मातृ सबल योजना के तहत बच्चों की आयु 14 से बढ़ाकर 18 वर्ष कर दी है और सहयोग राशि भी 1000 से बढ़ा कर 2000 रुपए कर दी है, लेकिन यह योजना सिर्फ विधवाओं के लिए है। हिमाचल प्रदेश की एकल नारी शक्ति संगठन को बच्चों की आयुसीमा व सहयोग राशि बढ़वाने में तो सफलता मिली, मगर अब उसकी मांग राज्य की सभी एकल महिलाओं के बच्चों को इस योजना में शामिल करने की है। राजस्थान में सामाजिक सुरक्षा पेंशन की रकम 125 रुपए प्रतिमाह से बढ़ाकर 400 रुपए कर दी गई है। झारखंड में प्रस्तावित महिला नीति में एकल महिलाओं को अलग श्रेणी में दर्शाया गया है, लेकिन इन चंद उपलब्धियों के साथ हमें एकल महिलाओं की मदद के लिए बनी सरकारी योजनाओं की हकीकत को भी नहीं भूलना चाहिए। भारत सरकार की स्वाधार योजना हो या राष्ट्रीय परिवार लाभ योजना ये एकल महिलाओं के बहुत बड़े हिस्से तक नहीं पहुंच पाती। राशन कार्ड प्रायः घर के पुरुष मुखिया के नाम जारी किए जाते हैं। पत्नी के अलग हो जाने की स्थिति में उसके नाम दूसरा राशन कार्ड नहीं बनाया जाता, जबकि छह साल पहले सर्वोच्च अदालत ने अपने एक खास आदेश में कहा है- विधवाओं एवं एकल नारी, जिसकी सहायता करने वाला कोई नहीं है, को भी इस योजना में शामिल किया जाए।

राशन कार्ड प्रायः घर के पुरुष मुखिया के नाम जारी किए जाते हैं। पत्नी के अलग हो जाने की स्थिति में उसके नाम दूसरा राशन कार्ड नहीं बनाया जाता।

नरेगा भी एकल महिलाओं को रोजगार मुहैया कराने में खास मददगार नहीं सिद्ध हुआ, क्योंकि अक्सर जॉब कार्ड परिवार के पुरुष सदस्य के नाम जारी किया जाता है व इसमें कार्य पुरुष एवं महिला के जोड़े को ही प्रदान किया जाता है। योजना आयोग की सदस्य डॉ. सईदा हमीद के अनुसार देश के सबसे महत्वपूर्ण गरीबी उन्मूलन कार्यक्रम के दायरे से एकल महिलाओं को बाहर रखने से भी 11वीं पंचवर्षीय योजना के उन घोषित उद्देश्यों को नुकसान पहुंचेगा, जिसमें समाज के सभी वर्गों के विकास पर अत्याधिक जोर दिया गया है। उन्होंने सुझाव दिया कि इस योजना में नए दिशा-निर्देश अपनाए जाएं, ताकि एकल महिलाओं को इस योजना का सही लाभ मिल सके। राष्ट्रीय एकल नारी अधिकार मंच की सरकार से मुख्य मांग एकल महिला को अलग पारिवारिक ईकाई का दर्जा, अलग राशन कार्ड, सामाजिक सुरक्षा राशि व जॉब कार्ड देने की है। अब देखना है कि मंच ने अपने मांगपत्र में केंद्र सरकार से 2011 की जनगणना में एकल महिलाओं को विधवा, तलाकशुदा, परित्यक्ता व अविवाहित की श्रेणियों में रखने की जो मांग की है, उस पर सरकार क्या रुख अपनाती है।

aryaa2001@rediffmail.com

महिला अधिकारों के प्रति संवेदनशीलता

अभी हाल ही में देश की अलग-अलग न्यायालयों द्वारा तीन अहम मामलों में फैसले सुनाए गए। तीनों मामले वैवाहिक संदर्भों से जुड़े हैं। एक मामले में अपना फैसला सुनाते हुए देश की सर्वोच्च अदालत कहती है कि यदि महिला अपनी मर्जी से पति का घर छोड़कर जाती है तो पति उसे गुजारा भत्ता देने के लिए बाध्य नहीं है।

दरअसल महिलाएं पति से गुजाराभत्ता अपने पास और कोई दूसरा स्थायी विकल्प न होने की स्थिति में ही मांगती हैं। कानून एक ओर इसे विवाहित महिला का अधिकार मानता है और दूसरी ओर इस तरह के फैसले महिलाओं के इस अधिकार को कम करते से लगते हैं। फैसले में मर्जी की बात कही गई है लेकिन क्या इस मर्जी को हमारा कानून परिभाषित कर सकता है! अपने ही परिवार को छोड़कर एक विकल्पहीन सामाजिक व्यवस्था में जाने का साहस हमारे देश की महिलाएं कर सकती हैं-यह बात तर्क से परे लगती है।

सुनीता ठाकुर
लेखिका स्तंभकार हैं

क्या आत्महत्या को सिर्फ इसलिए गुनाह न माना जाए कि वह व्यक्ति अपनी मर्जी से करता है, उसे उन हालातों तक पहुंचाने और विवश करने वाले व्यक्तियों और संदर्भों को क्या यों ही छोड़ दिया जाना चाहिए।

क्या आत्महत्या को सिर्फ इसलिए गुनाह न माना जाए कि वह व्यक्ति अपनी मर्जी से करता है, उसे उन हालातों तक पहुंचाने और विवश करने वाले व्यक्तियों और संदर्भों को क्या यों ही छोड़ दिया जाना चाहिए? अगर हां तो फिर झगड़ों को जन्म देने वाले हालात और व्यवहारों को पहचानते हुए उन्हें सुधारने की जरूरत होनी चाहिए। इस तरह के फैसले क्या महिलाओं के प्रति हमारे कानून के अंसवेदनशील नजरिए को नहीं जाहिर करते?

वास्तव में हमारा न्यायतंत्र आज तक सबूतों और तर्कों की जिस भाषा को अपनाता रहा है-पारिवारिक मामलों में वह किसी भी तरह तर्कसंगत और उपयोगी नहीं साबित हो सकती, क्योंकि परिवार में दैनिक जीवन में सदस्यों के व्यवहारों, बातचीत और जीवनचर्या में बहुत कुछ ऐसा होता है, जिसके कोई सबूत रोजाना इकट्ठे नहीं किए जा सकते और यदि कोई महिला ऐसा करने का दुस्साहस कर भी ले तो उसे तुनकमिजाज, झगड़ालू, असहनशील और भी न जाने कैसे-कैसे आरोपों का सामना करना ही पड़ता है।

कानून यदि महिलाओं को बराबरी और व्यक्तिगत सम्मान की गारंटी देता है तो उसे उन हालातों को बेहतर बनाए रखने की जिम्मेदाराना गारंटी भी देनी होगी, जिसके रहते महिलाएं अपने घर में अधिकार और सम्मान के साथ रह सके। कई ऐसे उदाहरण हैं जहां पति ने औरत को गुजाराभत्ता न देने के लिए समय से पूर्व ही रिटायरमेंट ले लिया, खुद को दिवालिया घोषित कर दिया, पति अपनी नौकरी छोड़कर भाग गया या ससुराल वालों ने उसे कानूनन अपनी संपत्ति और परिवार से बेदखल कर दिया। ऐसे में महिलाएं क्या करें जिस परिवार में वह रह रही है वहां अगर उसका जीना कठिन कर दिया जाए, तो वह क्या करे।

मानवीय संबंधों और व्यवहारों से जुड़े मामलों में कहीं भी ब्लैक एंड व्हाइट नहीं चल सकता-उसमें बहुत ऐसा होता है जिसे हम ग्रे-जोन कह सकते हैं और सारी करामात इसी ग्रे-जोन में छिपी होती है जो व्यक्ति के मजहब, परिवार, भावनाओं और मानसिकता से जन्म लेती हैं।

उत्पीड़न करने वालों को शह

अलका आर्य
लेखिका स्वतंत्र पत्रकार हैं।

हाल में केंद्रीय गृह मंत्रालय ने सभी राज्यों को एक पत्र भेजा है, जिसमें धारा 498 ए के तहत गिरफ्तारी को पहले कदम के रूप में इस्तेमाल करने की बजाय आखिरी उपाय मानने की सलाह दी गई है। इस पत्र के मसौदे से साफ हो जाता है कि इस सलाह के पीछे उन आरोपियों को राहत दिलाना है, जिन पर धारा 498 ए के तहत मामला दर्ज किया जाता है। मंत्रालय का कहना है कि यह कदम इस गैरजमानती, संज्ञेय व सुलह न करवाने वाली धारा के बेजा इस्तेमाल को रोकने के लिए उठाया गया है, क्योंकि ऐसा होने के कारण कई मामलों में तो पति के परिवार का प्रत्येक सदस्य जेल में है, चाहे औरत के खिलाफ क्रूरता बरतने में उसकी कोई भूमिका न हो। लेकिन बेजा इस्तेमाल के कुछ मामलों के रोकथाम के समांतर ये सवाल भी सामने आकर खड़े हो जाते हैं कि क्या इससे उत्पीड़न करने वालों को शह नहीं मिलेगी। पुलिस उनका बचाव करने के लिए उनके साथ जो सौदेबाजी करेगी, उससे किसका भला होगा। ऐसे में वैवाहिक हिंसा या दहेज उत्पीड़न की शिकार महिला को कानून से फायदा न मिलने का खतरा बढ़ जाएगा।

सवाल यह भी महत्वपूर्ण है कि अगर बेजा इस्तेमाल के केस सामने आते हैं तो उनसे मामले दर मामले की तरह निपटा जाए। न कि हर केस में तुरंत गिरफ्तारी की बजाय गिरफ्तारी को आखिरी उपाय के तौर पर अमल करने की सलाह दी जाए। बहरहाल राष्ट्रीय महिला आयोग ने गृह मंत्रालय की राज्य सरकारों को दी गई इस सलाह पर अपनी कोई प्रतिक्रिया जाहिर नहीं की है। स्त्री मुद्दों पर संवेदनशील कदम उठाने के लिए गठित राष्ट्रीय महिला आयोग की यह चुप्पी उसकी इस सरकारी सलाह के प्रति खामोश स्वीकृति भी हो सकती है।

गौरतलब है कि अपने देश में बीती सदी के 7वें व 8वें दशक में महिलाओं के खिलाफ हिंसा व दहेज हत्या के मामले में लगातार वृद्धि होते देख, देशभर के महिला संगठनों ने क्रिमिनल लॉ एमेंडमेंट कमेटी व सरकार पर घरेलू हिंसा व दहेज उत्पीड़न की शिकार महिलाओं को कानूनी संरक्षण प्रदान करने के लिए दबाव बनाया। इस दबाव का असर यह हुआ कि 1982 में इंडियन पीनल कोड में संशोधन कर धारा 498ए जोड़ दी गई। धारा 498ए में स्पष्ट किया गया है कि अगर पति या उसके रिश्तेदार विवाहित औरत के साथ क्रूरता से पेश आते हैं, उसे शारीरिक या मानसिक कष्ट पहुंचाते हैं व दहेज के लिए प्रताड़ित करते हैं तो उन्हें 3 साल की सजा हो सकती है। यह धारा गैरजमानती व संज्ञेय है।

अगर पति या उसके रिश्तेदार विवाहित औरत के साथ क्रूरता से पेश आते हैं व दहेज के लिए प्रताड़ित करते हैं तो उन्हें 3 साल की सजा हो सकती है।

इस धारा के तहत केस दर्ज होने पर वादी-प्रतिवादी के बीच सुलह भी नहीं हो सकती और पुलिस बिना प्रारंभिक जांच या वारंट के सबसे पहले आरोपी/आरोपियों को गिरफ्तार कर लेती है। सनद रहे कि धारा 498ए लागू होने के बाद पहली मर्तबा महिलाओं के खिलाफ घरेलू हिंसा को क्रिमिनल अपराध के दायरे में जगह तो जरूर मिल गई, लेकिन पुरुषप्रधान समाज के बीच ऐसी कड़ी धारा के विरोध में लामबंदी भी देखने को मिली।

महिला संगठनों का आरोप है कि पुलिस अक्सर इस धारा के तहत मामले दर्ज करने में आनाकानी करती है या मामलों को कमजोर बनाकर दर्ज करती है। मगर आरोपी पक्ष का कहना है कि शादीशुदा महिलाएं इसका बेजा इस्तेमाल कर फर्जी मामलों में बेकसूरों को जेल भिजवाती हैं, लिहाजा इस धारा को खत्म किया जाए या संशोधित कर इसे जमानती व सुलह के योग्य बना दिया जाए।

इस संदर्भ में यह याद रखना होगा कि धारा 498ए के ऐसे बेजा इस्तेमाल के प्रति बनी यह धारणा सिर्फ आम आदमी की ही नहीं, बल्कि कुछ साल पहले गृह मंत्रालय के अधीन गठित 2 कमेटियों ने भी इस धारा में संशोधन की अनुशंसा मंत्रालय को भेजी थी। यह बात दीगर है कि इन कमेटियों ने दुरुपयोग के कोई पुख्ता तथ्य दिए बिना ही संशोधन की अनुशंसा कर डाली थी।

यही नहीं दिल्ली उच्च न्यायालय व सर्वोच्च न्यायालय ने भी इसके बेजा इस्तेमाल के बावत चेताया है। गृह मंत्रालय ने अपने पत्र में धारा 498ए के बेजा इस्तेमाल के साथ-साथ इस तथ्य का भी जिक्र किया है कि ऐसी अदालती टिप्पणियों के बाद सरकार ने धारा 498ए में संशोधन के जरिए इस धारा के तहत आने वाले अपराध को सुलह के योग्य बनाने की कोशिश भी की थी, लेकिन महिला संगठनों के कड़े विरोध के कारण यह संभव नहीं हो सका। लिहाजा इस लाचारी से पार पाने व आरोपी लॉबी के दबाव से मुक्त होने के लिए गृह मंत्रालय ने जिस सलाह को सेफ अल्टरनेटिव के रूप में चुना है, उससे उत्पीड़न करने वालों को शह मिल सकती है व यह उल्टे नतीजे वाली भी साबित हो सकती है।

aryaa2001@rediffmail.com

कितना मददगार होगा एनआरआई सेल

मुद्दा

अलका आर्य

राष्ट्रीय महिला आयोग ने हाल में एनआरआई सेल का गठन किया है जिसका काम विवाह के बाद परदेशी पतियों द्वारा छोड़ दी गई या उनके जुल्म व धोखाधड़ी की शिकार महिलाओं की मदद करना है। इस सेल में दर्ज ऐसी शिकायत के मामले में राष्ट्रीय महिला आयोग उनकी मदद करेगा। गौरतलब है कि महीना पूर्व (27 अगस्त) एनआरआई सेल ने अपना काम करना शुरू किया और एक महीने के अंदर ही उसके पास 25 से ज्यादा शिकायतें आ चुकी हैं यानी औसतन रोजाना एक शिकायत। यह स्थिति तब है जब इसके बारे में अधिकांश लोगों को जानकारी नहीं है।

अंदाजा लगाया जा सकता है कि राष्ट्रीय महिला आयोग इसकी जानकारी अधिकाधिक लोगों तक पहुंचाए तो शिकायतों की संख्या कहां पहुंच जाएगी। यह भी नहीं भूलना होगा कि जरूरी नहीं कि ऐसी हर पीड़ित महिला शिकायत दर्ज कराए ही। इस सचाई से सरकार भी वाकिफ है कि हजारों शिकायतें विभिन्न कारणों से उस तक नहीं पहुंचती हैं। 'एनआरआई पतियों द्वारा त्यागी गई भारतीय महिलाओं की दशा' नामक सरकारी रिपोर्ट में कहा गया है कि ऐसी समस्याएं बढ़ती जा रही हैं। ऐसे मामलों में पत्नी को छोड़ना, अवैध संबंध, घरेलू हिंसा, एकतरफा तलाक व वीजा आदि शिकायतें प्रमुख हैं। इस रपट में अमेरिका, इंग्लैंड, कनाडा, दुबई, मलयेशिया आदि देशों में धोखाधड़ी के तहत की जा रही शादियों की शिकार भारतीय महिलाओं की स्थिति पर खासी चिंता व्यक्त की गई है। अमेरिकी हवाई अड्डों के किनारे खड़ी अनेक भारतीय लड़कियां पति का इंतजार करते देखी जा सकती हैं। इनमें से ज्यादातर मामलों में पति उन्हें छोड़ फरार हो जाते हैं।

एक अरब से ज्यादा की आबादी वाले इस देश में एनआरआई की संख्या अंदाजन ढाई करोड़ है। शादी के मामले में कई मर्तबा एनआरआई पुरुषों पर भारतीय

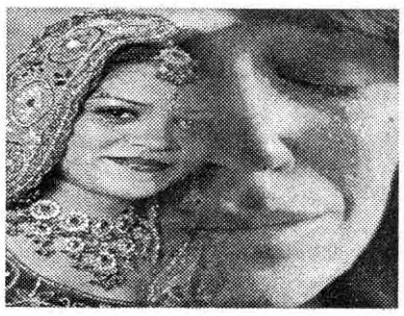

लड़की से शादी का दबाव रहता है। इसके पीछे मुख्य सामाजिक धारणा यह होती है कि सुसभ्य या सुसंस्कृत पत्नी सिर्फ भारतीय लड़की ही हो सकती है। इसका खामियाजा एनआरआई की भारतीय पत्नियां शारीरिक व मानसिक यंत्रणा सहकर चुकाती हैं। कानून से भी उन्हें ज्यादा राहत नहीं मिल पाती। विदेशी तलाक डिग्री भारतीय अदालतों में मान्य नहीं है और भारत में रहते हुए विदेशों में ऐसे मुकद्दमे लड़ना लगभग असंभव है। ऐसी औरतों की तफलीफों पर दिल्ली उच्च अदालत के जज वीरेन्द्र जैन ने कहा था ऐसे एनआरआई भारतीय अदालतों के क्षेत्र से बाहर होने का लाभ उठाते हैं। ज्यादातर मामलों में विवाहिता के पास मुकदमा लड़ने के लिए संसाधन नहीं होते ताकि अपराधी को उसके गलत कार्यों की सजा मिल सके।

ऐसी समस्याएं इसलिए भी असरदार तरीके से हैंडल नहीं हो रहीं क्योंकि कई देशों के साथ इस बाबत संधियां नहीं की गई हैं। अपने देश में अकेले पंजाब प्रांत से ही कई हजार महिलाओं को उनके एनआरआई पतियों ने त्याग दिया है। सवाल यह है कि इसके बावजूद भारतीय लड़कियां एनआरआई से शादी क्यों कर रही हैं? मनोचिकित्सकों की राय में इसकी वजह अच्छी, आरामदायक जिंदगी जीना व सामाजिक हैसियत है और असफल एनआरआई शादियों की दास्तान सुनने के बाद भी वे ये 'रिस्क' लेने को तैयार हैं। मां-बाप भी इसे सोशल स्टेटस ऊपर उठाने वाला सामाजिक मापदंड समझते हैं। परिवार वाले उन पर भारत से क्लीन ब्राइड लाने का दबाव बनाते हैं ताकि क्लीन फैमिली की परंपरा बरकरार रहे। लेकिन सब कुछ उतना उजला नहीं है।

राष्ट्रीय महिला आयोग का मुख्य जोर इस बिन्दु पर है कि किसी एनआरआई से शादी की स्थिति में विवाह का पंजीकरण महिला को उसके पति द्वारा छोड़े जाने की स्थिति में कानूनी रूप से मददगार होगा। विवाह पंजीकरण सभी विकसित देशों में अनिवार्य है और अंतरराष्ट्रीय महिला सम्मेलनों में भी इस पर सहमति बन चुकी है। दरअसल इस मामले में पीड़ित लड़कियों/महिलाओं की कानूनी सहायता के साथ ही जनता के बीच जागरूकता का स्तर बढ़ाना भी जरूरी है। हरियाण के मुख्यमंत्री भूपेन्द्र सिंह हुड्डा की भी यही राय है। सरकार ने एक सूची भी जारी की है जिसमें अभिभावकों से एनआरआई को दूल्हा बनाने से पहले कुछ महत्वपूर्ण पुख्ता जानकारी इकठ्ठा करने को कहा गया है। इसके अलावा विवाह पंजीकरण पर भी जोर दिया गया है। कई देशों में भारतीय दूतावास गैर-सरकारी संगठनों के जरिये पीड़िता की मदद कर रहे हैं। लेकिन कुछ खास नतीजे नहीं दिख रहे हैं। बहारहाल राष्ट्रीय महिला आयोग द्वारा गठित एनआरआई सेल पीड़ित महिलाओं को कितनी राहत पहुंचा पाएगा, इसके लिए कम से कम एक साल तक इंतजार करना होगा।

घरेलू हिंसा की मजबूत बेड़ियां

मुद्दा

ऋतु सारस्वत

हाल में झालावाड़ (राजस्थान) जिले में, 'बहू के चाल-चलन पर शक के चलते जेठ सहित परिवार के छह लागों ने यातना देने के बाद उसके सिर के बाल मुंडवा दिये।' अपनों द्वारा, ऐसी पीड़ा संवेदनशील कहे जाने वाले मानवीय समाज पर एक प्रश्नचिह्न है। स्त्री को अपने ही घर के पुरुष सदस्यों द्वारा प्रताड़ित किया जाना लज्जा का विषय है, परन्तु दुःखद यह है कि आर्थिक उन्नति की छलांगें लगाते हुए समाज में इसे सामान्य तौर पर लिया जाता है।

राष्ट्रीय परिवार स्वास्थ्य सर्वेक्षण (2005-06) के जरिये महिलाओं की स्थिति जानने के लिए भारत के 29 राज्यों में किये गये सर्वेक्षणों के आंकड़े महिलाओं की चिंताजनक स्थिति की ओर संकेत करते हैं। सर्वेक्षण के मुताबिक भारत में विवाहित महिलाओं का एक बड़ा हिस्सा (37.2 फीसदी) जीवन में कभी न कभी पति के हाथों शारीरिक हिंसा या यौन शोषण का शिकार होता है। यह सर्वेक्षण पांच जनसंख्या अनुसंधान केन्द्रों सहित 18 संगठनों ने किया। सर्वेक्षण से उजागर होता है कि अशिक्षित महिलाएं अधिक प्रताड़ित होती हैं। बिहार के बाद महिला प्रताड़ना में राजस्थान (46.3 प्रतिशत), मध्यप्रदेश (45.8 प्रतिशत), त्रिपुरा (44.1 प्रतिशत), मणिपुर (43.9 प्रतिशत) और उत्तर प्रदेश (42.4 प्रतिशत) का स्थान आता है। गर्भावस्था के दौरान महिलाओं के साथ हिंसा की दर भारत में सर्वाधिक है। संयुक्त राष्ट्र जनसंख्या कोष की हालिया रिपोर्ट के अनुसार भारत में 15 से 49 वर्ष की आयु की लगभग दो तिहाई विवाहिताएं घरेलू हिंसा का शिकार होती हैं। इसमें पिटाई, यौन प्रताड़ना और दुष्कर्म शामिल हैं।

संयुक्त राष्ट्र संघ की रिपोर्ट के अनुसार घरेलू हिंसा के कारणों में शामिल है- पति से बहस करना, खाना ठीक से या समय पर न बनाना, पर-पुरुष से बात करना, बच्चों

का ख्याल न रखना आदि। इन बनावटी कारणों से इतर घरेलू हिंसा के पीछे जो मूल कारण है 'पुरुष का अहं' जो हर कीमत पर स्त्री को अपने वर्चस्व में रखना चाहता है, और इसका सीधा रास्ता है, महिला की शारीरिक कमजोरी पर चोट करना। घरेलू हिंसा और नशे की लत में सीधा सम्बन्ध देखा गया है। घरेलू हिंसा के लिए जिम्मेदार पुरुषों में से करीब 50 प्रतिशत नशे के आदी पाये गये हैं।

पहली बार सितम्बर 2005 में कानून द्वारा परिवार व घर में होने वाले अत्याचारों से सुरक्षा प्रदान करने हेतु घरेलू हिंसा के विरुद्ध अधिनियम लागू हुआ। अधिनियम की धारा दो के अनुसार परिवार में किसी भी महिला के साथ पति अथवा परिवार के अन्य सदस्यों द्वारा किया जाने वाला व्यवहार, जिसमें महिला स्वयं को प्रताड़ित महसूस कर रही हो अथवा शारीरिक या मानसिक पीड़ा का शिकार हो रही हो, घरेलू हिंसा की श्रेणी में आएगा। इसमें मौखिक व भावनात्मक चोट भी शामिल है। किसी प्रकार का अपमान, उपहास, तिरस्कार, गाली, विशेषकर कन्या पैदा करने के कारण अपमान या उपहास भी घरेलू हिंसा की श्रेणी में आता है। इस अधिनियम की धारा दो के अनुसार कोई भी व्यक्ति, जिसे घरेलू हिंसा होने के संबंध में जानकारी प्राप्त हो, वह संरक्षण अधिकारी, मजिस्ट्रेट या पुलिस को सूचित कर सकता है। इस कानून की एक अन्य महत्वपूर्ण विशेषता, किसी पीड़ित स्त्री की शिकायत पर उसे घर से निकालने पर रोक, उसकी आर्थिक प्रतिभूतियों की सुरक्षा भी है। सवाल है कि इतने समय बाद क्या उक्त कानून का जमीनी स्तर पर उपयोग हो पा रहा है। सच यह है कि महिलाओं का निरक्षर तबका अपने हकों से अनभिज्ञ है और मध्यम वर्ग की महिला सामाजिक प्रतिष्ठा और इज्जत की खातिर चुपचाप सहती चली जाती है।

अपने घर में, अपनों के बीच रहते हुए उनके खिलाफ कानूनी लड़ाई लड़ना बड़ा मुश्किल कार्य है। कानून की शरण में जाने पर एक महिला को अपने जीवनसाथी या अन्य परिजनों से भावनात्मक सम्बन्ध कायम रखना मुश्किल है। ऐसी स्थिति में क्या किया जाए? भावनात्मक सुरक्षा आवश्यक है, परन्तु इससे अधिक आवश्यक है स्वयं की रक्षा। यदि स्वयं के अस्तित्व को समाप्त कर भावनात्मक रिश्तों को जीवित रखने की चेष्टा की भी जाएगी तो ऐसे भावनात्मक रिश्ते सिवाय छल के कुछ और साबित नहीं होंगे। इन सबसे महत्वपूर्ण बात यह है कि जब भी कोई महिला अपने परिजनों द्वारा येन-केन प्रकारेण किसी भी तरह शारीरिक, मानसिक या भावनात्मक तौर पर पहली बार हिंसा का शिकार होती है तो उसे पुरजोर तरीके से इसका तत्काल विरोध करना चाहिए, क्योंकि इससे यह संभावना बढ़ जाती है कि पुरुष भविष्य में स्त्री को प्रताड़ित करने से पहले विचार करेगा। प्रेम में समर्पण ठीक है, पर उस हद तक नहीं अपना अस्तित्व छिन्न-भिन्न होने लगे।

महिलाओं के लिए स्पेशल बस

अंजलि सिन्हा

लेखिका 'स्त्री अधिकार संगठन' से संबद्ध हैं

महिलाओं को सफर के दौरान रोज-रोज अनेकों प्रकार के दबाव और हिंसा झेलनी पड़ती है। उनका बुनियादी हक है कि वे भयविहीन वातावरण में स्वयं को सुरक्षित रखते हुए अपनी नौकरी, अपना पेशा या पढ़ाई जारी रख सकें।

दिल्ली हाईकोर्ट में एक जनहित याचिका दायर की गई थी, जिसमें मांग की गई थी कि दिल्ली की सभी बस रूटों पर महिलाओं के लिए डीटीसी (दिल्ली ट्रांसपोर्ट कार्पोरेशन) की तरफ से स्पेशल बसें चलाई जाएं। यह याचिका रवि चंद्र प्रकाश की तरफ से दायर की गई थी। इसकी सुनवाई न्यायाधीश एसपी शाह व न्यायाधीश एस मुरलीधरन की बेंच कर रही है। हाईकोर्ट ने अब केंद्र और दिल्ली सरकार को इस मामले में 11 नवंबर तक जवाब दाखिल करने का निर्देश दिया है। इस स्पेशल बस की सुविधा की मांग का कारण दिल्ली की बसों में महिलाओं के साथ छेड़छाड़ तथा बदसलूकी की घटना बताई गई है। दरअसल बीते साल बस से सफर करने वाली महिलाओं में से एक तिहाई को छेड़छाड़ का सामना करना पड़ा था। मेट्रो के संदर्भ में भी बढ़ती भीड़ के मद्देनजर आरक्षित सीट के बाद महिलाओं के लिए स्पेशल कोच लगाने की मांग हो रही है।

केंद्र तथा राज्य सरकारों व डीटीसी की तरफ से क्या जवाब आता है तथा वे क्या समाधान सुझाते हैं, इसका तो नवंबर में पता चलेगा, लेकिन यह याचिका एक अति संवेदनशील तथा जरूरी मुद्दे पर प्रकाश डालती है। यह सही है कि महिलाओं को सफर के दौरान रोज-रोज अनेकों प्रकार के दबाव और हिंसा झेलनी पड़ती है। उनका बुनियादी हक है कि वे भयविहीन वातावरण में स्वयं को सुरक्षित रखते हुए अपनी नौकरी, अपना पेशा या पढ़ाई जारी रख सकें। लेकिन विचार करें कि हर रूट पर कितनी स्पेशल बसें चलेंगी और मेट्रो का एक कोच भी इस जरूरत को कैसे पूरा करेगा? महिलाओं का सार्वजनिक दायरे में प्रवेश बढ़ेगा और बढ़ना ही चाहिए, यानी लगभग आधी आबादी के लिए स्पेशल इंतजाम करना होगा। दूसरी बात कि शेष बसों और कोचों में मनचलों का कब्जा क्यों रहे? आज के भागदौड़ के समय में स्पेशल वाहनों का इंतजार करते रहना कितना संभव होगा? सबसे अहम मुद्दा यह है कि क्यों न सभी जगह, सभी वाहनों में महिलाओं के सुरक्षित सफर का अधिकार सुनिश्चित किया जाए? हो सकता है कि यह मांग बड़ी या असंभव लगे, लेकिन उचित समाधान यही होगा, ताकि समस्या को जड़ से खत्म किया जा सके। वरना मनचले तंग करने तथा हिंसा करने की जगह या अवसर तलाश ही लेंगे, फिर महिलाएं कहां-कहां खुद को बचाती रहेंगी?

बसों की संख्या यदि इतनी हो कि भीड़ का दबाव कम हो या निश्चित संख्या के बाद बसों में सवारियों को न चढ़ने दिया जाए तो शायद समस्या पर अंकुश लगाया जा सकता है। आखिर असभ्यता में आनंद उठाने का अवसर किसी को क्यों मिले? जरूरत है कि महिलाएं पुरुषों के साथ कहीं भी, कभी भी सफर करने में असहज महसूस न करें और ऐसी घटना होने पर साथ सफर करने वाले सहयात्री ही मनचलों को सबक सिखाएं। इसके साथ ही प्रशासन तथा पुलिस तंत्र को और चुस्त और सक्षम होना पड़ेगा।यद्यपि अन्य बसों या ट्रेन के कोचों में चढ़ने के लिए नियमतः महिलाओं को मनाही नहीं होगी, लेकिन यह व्यवस्था लोगों में ऐसी प्रवृत्ति को बढ़ाएगी, जिसमें यह सहज अपेक्षा की जाने लगेगी कि महिलाएं उनके लिए दिए गए सुरक्षित वाहनों में ही सफर करें।

अभी हाल ही में रेल मंत्रालय ने दिल्ली तथा अन्य महानगरों की महिलाओं के लिए कुछ स्पेशल ट्रेनें चलवाई हैं, उन्हें चलते रहना चाहिए, किंतु यह कदम अन्य ट्रेनों को सुरक्षित करने का विकल्प नहीं है। सभी ट्रेनों को अनिवार्यतः सुरक्षित करने की जिम्मेदारी लेनी होगी, क्योंकि कोई भी स्थान या वाहन ऐसा नहीं हो कि उसमें कुछ लोग मनमानी करें।

anjali.sinha1@gmail.com

राजधानी की बसों में सफर असुरक्षित

नई दिल्ली, 14 नवंबर (जनसत्ता)। सौ में बयासी महिलाओं का मानना है कि राजधानी में बसों में चलना असुरक्षित है। खासकर निचले तबके की महिलाओं के बीच सेंटर फॉर इक्विटी एंड इंक्लुजन (सिक्विन) के सर्वे में ऐसे कई निष्कर्षों का खुलासा हुआ है। रपट शुक्रवार को राजधानी में जारी की गई। 'परसेप्शन एंड एक्सपीरियेंस ऑफ जैंडर्ड वायलेंस' शीर्षक से जारी इस रपट में राजधानी में सार्वजनिक स्थलों पर हिंसा की प्रकृति और उसके कारणों व आयामों को विस्तार से बताया गया है।

बयासी फीसद महिलाओं की राय

'सीएमएस कम्युनिकेशन' की ओर से कराए इस सर्वे में नई व पुरानी दिल्ली में अलग-अलग सामाजिक-आर्थिक वर्ग की 12 से 55 साल आयु वर्ग की 630 महिलाओं को शामिल किया गया। इसमें झुग्गी बस्तियों, स्कूलों, कालेजों, मेट्रो स्टेशनों, बस स्टॉप, बाजारों और रिहाइशी इलाकों की महिलाओं से बातचीत कर निष्कर्ष निकाले गए।

इस सर्वे की मानें तो दिल्ली सरकार का 'मेक दिल्ली सेफ फॉर विमेन' अभियान बहुत सफल नहीं हो रहा है। 'सिक्विन' की सह संस्थापक सारा पायलट ने कहा सर्वे की रपट चौंकाने वाली हैं और राष्ट्रमंडल खेलों को लेकर इस बाबत ध्यान देने की जरूरत है।

सर्वे में कई चौंकाने वाले तथ्य हैं। मसलन 96 फीसद महिलाओं का मानना है कि दिल्ली महिलाओं के लिए असुरक्षित होती जा रही है। चांदनी चौक, करोलबाग, रोहिणी व जमना पार में वारदातें ज्यादा होती हैं। 82 फीसद औरतें बसों को दिल्ली में परिवहन का सबसे असुरक्षित साधन मानती हैं। 88 फीसद महिलाओं ने कहा कि किसी सार्वजनिक स्थान पर छेड़छाड़ की वारदात पर चश्मदीदों की मदद नहीं मिलती। जनता आगे नहीं आती। इतना ही नहीं, औरतों का कानून पर भरोसा भी कम होता जा रहा है।

इस बाबत सर्वे में राष्ट्रमंडल खेलों के मद्देनजर महिलाओं के मनोबल को बढ़ाने की जरूरत भी बताई गई है। खासकर झुग्गियों में दुष्कर्म के बढ़ते मामलों पर चिंता जताते हुए सिक्विन ने इस बाबत जागरुकता के कानूनों से उन्हें रूबरू कराने की अपील की है। इसके अलावा रेडियो, टीवी व पोस्टरों के जरिए भी सुरक्षित दिल्ली बनाने में कानूनी उपबंधों को झुग्गियों व अनधिकृत कालोनियों तक पहुंचाने की बात कही गई है।

ताकि महिलाओं का सफर हो सरक्षित

लेडिज स्पेशल

अन्नू आनंद

कामकाजी महिलाओं को घर और दफ्तर की जद्दोजहद से थोड़ी राहत मिली है। बड़े शहरों और उसके आसपास के क्षेत्रों में रहने वाली महिलाओं के लिए घर से बाहर निकलने के बाद सबसे बड़ी चुनौती ट्रेन या बस में यात्रा करने की होती है। भीड़ भरी बसों में महिलाओं के लिए सफर करना यातना से कम नहीं होता। लेकिन हाल ही में रेल मंत्रालय ने दिल्ली के अलावा तीन और महानगरों मुंबई, कोलकाता और चेन्नई से आठ लेडीज स्पेशन ट्रेनों की शुरुआत करके महिलाओं की सुखद और सुरक्षित यात्रा की मांग को कुछ हद तक पूरा करने का काम किया है।

अगस्त महीने से शुरू हुई इन रेलगाड़ियों का मकसद महानगरों में काम करने वाली महिलाओं के प्रति होते अपराधों को कम करते हुए इनकी यात्रा को सरल और सुरक्षित करना है। राजधानी दिल्ली के लिए हरियाणा के पलवल से ऐसी ही एक ट्रेन सुबह चलाई गई है, जो शाम को वापस पलवल जाती है। पीले और नीले चटख रंग की इस ट्रेन का अधिकतर इस्तेमाल छोटे शहरों से महानगरों के कॉलेजों में पढ़ने वाली लड़कियां और दफ्तरों में काम करने वाली महिलाएं कर रही हैं। इस ट्रेन में महिलाओं के बैठने के लिए गद्दे वाली सीट के साथ बिजली के बेहतर पंखे और साफ-सफाई का खास खयाल रखा गया है। दस रुपये के टिकट में भीड़भाड़ और धक्का-मुक्की से हटकर सीट पर बैठ गंतव्य तक पहुंचाने वाली ये ट्रेनें महिलाओं में काफी लोकप्रिय हो रही हैं। इसके अलावा महिला टीटीई और महिला सुरक्षाकर्मियों की मौजूदगी इन गाड़ियों को पूरी तरह लेडीज-फ्रेंडली बनाती है।

देश के तमाम शहरों में कामकाजी महिलाओं की सबसे बड़ी चिंता घर से निकलने के बाद मंजिल तक पहुंचने की होती है। इसके लिए उपलब्ध रेल या बस जैसे सार्वजनिक परिवहनों में पुरुषों की भीड़ पे जूझते हुए सफर करना उनके लिए कोई आसान काम नहीं है। हालांकि पिछले कुछ समय से भीड़ कम करने के लिए गाड़ियों की संख्या काफी बढ़ाई गई है। इसके बावजूद कामकाजी महिलाओं को ट्रेन में चढ़ते हुए मर्दों के साथ धक्कामुक्की का सामना करना पड़ता है। सीट मिलना तो दूर की बात, खड़े होने के लिए भी उन्हें मशक्कत करनी पड़ती है। खड़े होने की जगह मिल गई, तो मर्दों की घूरती निगाहों से बचना, जान-बूझकर छूने की कोशिशों को नाकाम करना और उनकी अशालीन टिप्पणियों को अनसुना करने की कोशिशें भी काफी तकलीफदेह होती हैं। अधिकतर महिलाओं की शिकायत रहती है कि उनके लिए घर और दफ्तर के कार्यों से कहीं अधिक थकाऊ ट्रेनों का सफर होता है। कभी बैठने को सीट मिल भी गई, तो अपराधी तत्वों द्वारा पर्स छीनने या फिर छेड़खानी की आशंका हमेशा बनी रहती है।

मुंबई में लेडीज स्पेशल चलाने के सतरह वर्ष बाद वैसी ही एक गाड़ी नई दिल्ली से पलवल के बीच शुरु हुई है। पर बेहतर होगा कि तमाम गाड़ियों में महिलाओं की सुरक्षित यात्रा की व्यवस्था की जाए

इन समस्याओं पर काबू पाने के मकसद से हालांकि सामान्य गाड़ियों में एक या दो महिला कोच महिलाओं के लिए आरक्षित रखे जाते हैं। लेकिन आर्थिक सबलता के लिए घर से बाहर निकलने वाली महिलाओं की बढ़ती तादाद को देखते हुए एक या दो कोच कभी पर्याप्त साबित नहीं हुए। इसके अलावा महिला डब्बे भी अकसर पुरुषों से भरे रहते हैं। इन डब्बों में सफर करने वाले पुरुषों का तर्क होता है कि जब महिलाएं पुरुषों के डब्बे में सफर कर सकती हैं, तो पुरुष महिलाओं के कंपार्टमेंट में यात्रा क्यों नहीं कर सकते।

ट्रेनों में महिलाओं के साथ छेड़खानी की बढ़ती घटनाओं को देखते हुए 1992 में सबसे पहले मुंबई में दो लेडीज स्पेशल ट्रेन की शुरुआत की गई थी, लेकिन ये दो गाड़ियां वहां की कामकाजी महिलाओं की बढ़ती संख्या को देखते हुए पर्याप्त नहीं थीं। इसके बावजूद वहां लेडीज स्पेशल की संख्या में अभी तक बढ़ोतरी नहीं हो पाई। इस दौरान अन्य महानगरों में लेडीज स्पेशल की मांग तो होती रही, लेकिन रेल मंत्रियों ने इसे तवज्जो नहीं दी। ममता बनर्जी ने इस बार रेल मंत्रालय का कार्यभार संभाला, तो अपने पहले ही बजट में महिलाओं के लिए आठ स्पेशल ट्रेन चलाने का ऐलान किया।

इसमें कोई शक नहीं कि सरकार के इस प्रयास से अनेक कामकाजी महिलाओं को राहत पहुंची है। लेकिन केवल विशेष रेलगाड़ियां हर महिला को आरामदायक और चिंतामुक्त सफर करने की सहूलियत नहीं देतीं। अनेक नारीवादियों का तर्क है, और गलत भी नहीं है, कि महिलाओं के लिए सुरक्षा की व्यवस्था केवल लेडीज स्पेशल में नहीं, हर ट्रेन में होनी चाहिए। अपने पुरुष रिश्तेदारों के साथ आम रेलगाड़ियों में सफर करने वाली महिलाओं को भी सुखद और आरामदायक यात्रा करने का पूरा अधिकार है।

पिछले एक दशक में महिलाओं की जरूरतों को ध्यान में रखते हुए यातायात को सुरक्षित करने के उद्देश्य से कई देशों में उनके लिए विशेष बसें और ट्रेनों की शुरुआत की गई है। मैक्सिको में पिछले ही साल महिला बसों की शुरुआत की गई। अब वहां की सरकार एक ऐसा अध्यादेश लाने का प्रयास कर रही है, जिससे महिलाओं को सार्वजनिक स्थानों पर तंग करने वालों को सजा दी जा सके। अपने यहां भी महिलाओं को घर से बाहर रेल, बस या कार्यालय में सुरक्षित वातावरण प्रदान करने के लिए ऐसे प्रयासों की जरूरत है।

(लेखिका स्वतंत्र पत्रकार हैं)

गेम्स में कैसे होगी महिलाओं की सुरक्षा

सर्वे में खुलासा राजधानी में 95 फीसदी महिलाएं असुरक्षित

अमर उजाला ब्यूरो

82 फीसदी महिलाओं के लिए परिवहन असुरक्षित साधन

88 फीसदी की राय छेड़छाड़ होने पर जनता मदद नहीं करती

44 फीसदी महिलाएं घटना के संबंध में कुछ नहीं करतीं

10 वर्ष से कम उम्र की बच्चियां सबसे ज्यादा असुरक्षित

नई दिल्ली। कॉमनवेल्थ गेम्स के दौरान महिलाओं की सुरक्षा के लिए भले ही तमाम तरह के प्रयास किए जा रहे हों लेकिन दिल्ली महिलाओं के लिए सुरक्षित नहीं हैं। यह खुलासा एक संस्था द्वारा सार्वजनिक स्थलों पर 12 वर्ष से 55 वर्ष उम्र तक की महिलाओं पर किए गए सर्वे से हुआ है। सर्वे में कहा गया है कि राजधानी में विभिन्न आयु वर्ग की 95 फीसदी महिलाएं ऐसी हैं जो खुद को असुरक्षित महसूस करती हैं। गेम्स के मद्देनजर परिवहन के विकास पर सबसे ज्यादा ध्यान दिया जा रहा है। इसके बावजूद 82 फीसदी महिलाओं के लिए परिवहन ही असुरक्षित साधन है। लिहाजा कॉमनवेल्थ में महिलाओं की सुरक्षा कैसे की जाएगी इस पर सवालिया निशान लग गया है।

सेंटर फॉर इक्विटी इंड इंक्लुजन के परसेप्शन एंड एक्सपीरियेंस ऑफ जैंडर्ड वायलेंशस इन पब्लिक प्लेसेज इन दिल्ली ने महिलाओं की असुरक्षा के संबंध में एक रिपोर्ट जारी की है। सिक्विन की सह संस्थापक सारा पायलट ने इसका खुलासा करते हुए कहा कि दिल्ली में सार्वजनिक स्थलों पर महिलाओं के साथ छेड़छाड़ काफी आम बात है। घटना की शिकार होने के बाद 44 फीसदी महिलाएं घटना के बारे में किसी से कुछ नहीं कहतीं जबकि 95 फीसदी ने माना कि सार्वजनिक स्थानों पर छेड़छाड़ की शिकार बनने की आशंका से उनके आने-जाने पर असर पड़ता है। सबसे अधिक चौंकाने वाले तथ्य 10 साल से कम उम्र की बच्चियों के संबंध में हैं। 66 फीसदी औरतों का कहना है कि 10 वर्ष से कम उम्र की बच्चियां सबसे ज्यादा असुरक्षित हैं। सर्वे में 88 फीसदी महिलाओं ने माना कि किसी सार्वजनिक स्थान पर छेड़छाड़ का शिकार बनने पर उन्हें जनता से कोई मदद नहीं मिलती है। सर्वे के लिए नई दिल्ली और पुरानी दिल्ली में अलग-अलग आर्थिक वर्गों की 630 किशोरियों और औरतों को शामिल किया गया है। सर्वे के जरिए झुग्गी, बस्तियों, स्कूलों, कालेजों, मेट्रो स्टेशनों, बस स्टॉप, बाजारों और रिहायशी इलाकों तक पहुंच बनाई गई।

महिला सुरक्षा को चलाया जाएगा जागरूकता अभियान

नई दिल्ली (ए)। सार्वजनिक स्थलों पर महिलाओं और लड़कियों के साथ बढ़ती हिंसक घटनाओं को रोकने और शहर में महिलाओं की सुरक्षा खामियों को दूर करने के लिए दिल्ली सरकार व्यापक जागरूकता अभियान शुरू करेगी।

दिल्ली की स्वास्थ्य एवं परिवार कल्याण, महिला और बाल विकास मंत्री प्रो. किरण वालिया ने बुधवार को कनॉट प्लेस के सेन्ट्रल पार्क में आयोजित एक समारोह में 'महिलाओं के लिए सुरक्षित दिल्ली' अभियान की शुरुआत के मौके पर कहा कि व्यापक अभियान में पुलिस, नगर नियोजकों, सेवा प्रदाताओं, परिवहन अधिकारियों, सामुदायिक समूहों, आवास समूहों और स्वयं सेवी संगठनों की मदद ली जाएगी। प्रो. वालिया ने कहा कि इस कार्यक्रम की शुरुआत दिल्ली सरकार यूनीफेम, जागोरी और यूएन हेबिटेट के साथ मिलकर कर रही है जिसका उद्देश्य राजधानी को महिलाओं और कमजोर समूह के लिए ऐसे शहर का निर्माण करना है जहां वे सुरक्षित माहौल में रह सकें। उन्होंने कहा कि महिलाओं में सुरक्षा और संरक्षा के प्रति जागरूकता लाने के लिए जरूरी है कि उन्हें सामाजिक, आर्थिक और राजनीतिक सभी लिहाज से अधिकार संपन्न बनाया जाए। इसके साथ-साथ महिलाओं को राष्ट्र की मुख्यधारा में लाने के लिए सरकार की नीतियों और कार्यक्रमों में समान अवसर देना होगा। उन्होंने कहा कि पुलिस को रोकथाम संबंधी उपायों के साथ-साथ मामला दर्ज होने पर तुरंत दक्षतापूर्ण ढंग से कदम उठाने होंगे। प्रो. वालिया ने कहा कि दिल्ली सरकार के भागीदारी कार्यक्रम के जरिये आवास कल्याण संघों, बाजार एसोसिएशनों और महिला संघों को जोड़ा जाएगा जिससे कि राजधानी में महिलाओं के लिए सुरक्षा और संरक्षा कार्यक्रम को सफल बनाया जा सके।

उन्होंने उम्मीद जताई कि राज्य सरकार के कार्यक्रमों का देश के अन्य शहरों में भी किया जाएगा। यूनीफेम की क्षेत्रीय निदेशक, एनी स्टेनहैमर ने उम्मीद जताई कि सभी लोग मिलजुल कर देश और दक्षिण एशिया के सामने एक मॉडल प्रस्तुत करेंगे। उन्होंने कहा कि सियोल, दार ए सलाम, बागोटा और रोजारियो समेत विश्व के अनेक शहरों ने महिलाओं के लिए सुरक्षित शहरों संबंधी कार्यक्रम बनाए हैं जिससे कि दक्षतापूर्ण तरीके से महिलाओं एवं लड़कियों की असुरक्षा और समस्याओं पर अंकुश लगाया जा सके।

महिलाओं को पूर्ण सुरक्षा प्रदान करने के लिए हमें सोच में बदलाव लाना होगा : किरण वालिया

नई दिल्ली (ए)। दिल्ली सरकार ने सार्वजनिक स्थानों पर महिलाओं के खिलाफ बढ़ती हिंसा पर लगाम लगाने तथा शहर में उन्हें सुरक्षा प्रदान करने में लापरवाही की समस्या दूर

करने के उद्देश्य से बुधवार को 'महिलाओं के लिए सुरक्षित दिल्ली पहल' की शुरुआत की। इस पहल की शुरुआत यूएनआईएफईएम, महिलाओं की समस्याओं के लिए लड़ने वाली संस्था जागोरी तथा यूएन हैबीटैट के सहयोग से की गई है। दिल्ली की महिला एवं बाल विकास तथा स्वास्थ्य कल्याण मंत्री किरण वालिया ने बुधवार को इस अभियान की विधिवत शुरुआत की। इस अवसर पर प्रो. वालिया ने कहा किमहिलाओं को पूर्ण सुरक्षा प्रदान करने के लिए हमें अपनी सोच में बदलाव लाना होगा। इस दिशा में आज का युवा वर्ग अपनी महत्वपूर्ण भूमिका निभा सकता है। महिलाओं के साथ होने वाली हिंसा की समस्या की कोई भौगोलिक सीमा नहीं है। यह समस्या विश्व के सभी क्षेत्रों में रहने वाली महिलाओं की समस्या है। उन्होंने कहा कि कई बार ऐसा देखने को मिलता है कि पुलिस अधिकारी महिलाओं की शिकायत पर उचित ध्यान नहीं देते। यहां तक कि बलात्कार जैसे अपराधों में भी पीड़ित महिलाओं को अपनी शिकायत दर्ज कराने के लिए अदालतों को दरवाजा खटखटाना पड़ता है। पुलिस को महिलाओं के प्रति होने वाले अपराधों के प्रति ढुलमुल प्रवृत्ति बंद करके उनकी सुरक्षा सुनिश्चित करने की दिशा में ठोस कार्रवाई करनी चाहिए। प्रो. किरण वालिया ने कहा कि दिल्ली सरकार एक ऐसी योजना बनाने पर विचार कर रही है जो भविष्य की जरूरतों के मुताबिक फिट हो। इस योजना में पुलिस के साथ ही शहर के योजनाकारों, सेवा प्रदाता विभागों, परिवहन विभागों, सामुदायिक समूहों और रेजीडेंट वेलफेयर समूहों एवं गैर सरकारी संगठनों को शामिल किया जाएगा।

'महिलाओं के लिए सुरक्षित दिल्ली पहल' शुरू

प्रमुख संवाददाता नई दिल्ली

दिल्ली सरकार ने सार्वजनिक स्थानों पर महिलाओं के खिलाफ बढ़ती हिंसा पर लगाम लगाने तथा शहर में उन्हें सुरक्षा प्रदान करने में लापरवाही की समस्या दूर करने के उद्देश्य से बुधवार को 'महिलाओं के लिए सुरक्षित दिल्ली पहल' की शुरुआत की। इस पहल की शुरुआत यूएनआईएफईएम महिलाओं के हक के लिए लड़ने वाली संस्था जागोरी तथा यूएन हैबीटेट के सहयोग से की गई है।

दिल्ली की महिला एवं बाल विकास तथा स्वास्थ्य कल्याण मंत्री किरण वालिया ने बुधवार को इस अभियान की विधिवत शुरुआत की। इस अवसर पर प्रो.वालिया ने कहा कि महिलाओं के लिए एक पूर्ण सुरक्षा प्रदान करने के लिए हमें अपनी सोच में बदलाव लाना होगा। इस दिशा में आज का युवा वर्ग अपनी महत्वपूर्ण भूमिका निभा सकता है। महिलाओं के साथ होने वाली हिंसा की समस्या की कोई भौगोलिक सीमा नहीं है। यह समस्या विश्व के सभी क्षेत्रों में रहने वाली महिलाओं की समस्या है।

किरण वालिया ने कहा कि कई बार ऐसा देखने को मिलता है कि पुलिस अधिकारी महिलाओं की शिकायत पर उचित ध्यान नहीं देते। यहां तक कि बलात्कार जैसे अपराधों में भी पीड़ित महिलाओं को अपनी शिकायत दर्ज कराने के लिए अदालतों को दरवाजा खटखटाना पड़ता है। पुलिस को महिलाओं के प्रति होने वाले अपराधों के प्रति ढुलमुल प्रवृति बंद करके उनकी सुरक्षा सुनिश्चित करने की दिशा में ठोस कार्रवाई करनी चाहिए।

प्रो.वालिया ने कहा कि दिल्ली सरकार एक ऐसी योजना बनाने पर विचार कर रही है, जो भविष्य की जरुरतों के मुताबिक फिट हो। इस योजना में पुलिस के साथ ही शहर के योजनाकारों, सेवा प्रदाता विभागों, परिवहन विभागों, सामुदायिक समूहों और रेजीडेंट वेलफेयर समूहों एवं गैरसरकारी संगठनों को शामिल किया जाएगा।

डीटीसी बसों में लगेंगे निगरानी कैमरे

जनसत्ता संवाददाता

नई दिल्ली, 26 नवंबर। डीटीसी बसों में महिलाओं के साथ होने वाली छेड़छाड़ को रोकने के लिए सरकार क्लोज सर्किट कैमरे लगाएगी। इसके अलावा महिलाओं की सुरक्षा के लिए व्यापक जागरुकता अभियान चलाए जाएंगे। दिल्ली की स्वास्थ्य और महिला व बाल विकास मंत्री प्रो किरण वालिया ने यह बातें कहीं। वे महिलाओं के लिए सुरक्षित दिल्ली अभियान के उद्घाटन के मौके पर बोल रही थीं।

प्रो. किरण वालिया ने कहा कि डीटीसी की बसों में महिलाओं की सुरक्षा के लिए क्लोज सर्किट कैमरे लगवाए जाएंगे। ताकि कानून का उल्लंघन करने वालों और महिलाओं से हिंसा करने वालों के खिलाफ कड़ी कार्रवाई की जा सके। उन्होंने कहा कि

मनचलों पर नकेल कसने के लिए कवायद

इस बारे में वे मुख्यमंत्री और दिल्ली के स्वास्थ्य मंत्री से व्यापक चर्चा करेंगी। ताकि परिवहन निगम की सभी बसों में क्लोज सर्किट कैमरे लगवाए जा सकें।

उन्होंने कहा कि महिलाओं के समेकित विकास और उनकी बहुमुखी प्रतिभा के विकास के लिए व्यापक कार्यक्रम चलाए जाएंगे ताकि उन्हें राष्ट्र के विकास की मुख्य धारा में लाया जा सके। प्रो वालिया ने कहा कि महिलाओं के खिलाफ हिंसा पर काबू पाने और उनकी रक्षा के लिए व्यापक जागरुकता अभियान चलाया जाएगा। दिल्ली को महिला सुरक्षा के लिहाज से एक आदर्श शहर बनाने के लिए दिल्ली सरकार दिल्ली पुलिस, शहर नियोजकों, परिवहन प्रबंधकों, सामुदायिक समूहों, निवासी कल्याण समितियों और स्वयं सेवी संस्थाओं के माध्यम से व्यापक अभियान चलाया जाएगा।

'सुरक्षित दिल्ली पहल' से महफूज रहेंगी महिलाएं

योजना

विभिन्न संगठनों के सहयोग से दिल्ली सरकार ने बनाई योजना

महिलाओं को और कमजोर वर्ग को सुरक्षा देने की कवायद

नई दिल्ली। दिल्ली में महिलाओं के खिलाफ हिंसा और उनकी सुरक्षा का जिम्मा अब 'सुरक्षित दिल्ली पहल' पर होगा। राजधानी में सार्वजनिक स्थलों पर महिलाओं की सुरक्षा के लिए यूनिफेम (यूएनआईएफईएम), जागोरी और यूएन हैबिटेट के सहयोग से दिल्ली सरकार ने सुरक्षित दिल्ली पहल (सेफ देल्ही फार विमेन इनिभिएटिव) योजना लांच की है। दिल्ली स्थित सेंट्रल पार्क में आयोजित एक समारोह में बुधवार को यह योजना लांच की गई।

महिलाओं के लिए सुरक्षित दिल्ली पहल के जरिये दिल्ली सरकार का उद्देश्य एक ऐसे शहर के निर्माण की दिशा में कार्य करना है, जहां महिलाएं एवं कमजोर समूह सुरक्षित रहें और सुरक्षित माहौल में कहीं भी आ-जा सकें। महिला एवं बाल विकास और स्वास्थ्य परिवार कल्याण मंत्री डॉ. किरण वालिया ने बताया कि शहरों में एक समग्र तरीके से महिलाओं की सुरक्षा पर ध्यान देने के लिए एक मॉडल का निर्माण किया जाएगा। उन्होंने बताया कि दिल्ली सरकार एक योजना बना रही है, जिसके अंतर्गत स्टेकहोल्डर्स के रूप में पुलिस, शहरी योजनाकार, सेवा प्रदाता, परिवहन, पदाधिकारी, सामुदायिक समूह और सामाजिक संगठनों के पदाधिकारी होंगे। पुलिस को रोकथाम संबंधी उपायों और केस रिपोर्ट होने पर तुरंत एवं दक्षतापूर्ण ढंग से कदम उठाने के दोनों कार्य करने होंगे। शहरी योजना तैयार करने और डिजाइन में जेंडर को एक मूल तत्व के रूप में शामिल किया जाएगा ताकि शहरों को अधिक सम्मिलित स्वरूप प्रदान किया जा सके।

महिला सुरक्षा को व्यापक अभियान चलाएगी सरकार

'सेफ दिल्ली फोर वूमैन' में हिस्सा लेती युवतियां। फोटो : बीबी यादव

नई दिल्ली (वसं)। राजधानी में महिलाओं व लड़कियों के साथ बढ़ती हिंसक घटनाओं पर लगाम लगाने तथा महिलाओं की सुरक्षा खामियों को दूर करने के लिए दिल्ली सरकार व्यापक जागरूकता अभियान शुरू करेगी।

दिल्ली की महिला व बाल विकास मंत्री प्रो. किरण वालिया ने बुधवार को कनॉट प्लेस स्थित सेंट्रल पार्क में आयोजित एक समारोह में महिलाओं के लिए सुरक्षित दिल्ली अभियान की शुरुआत के मौके पर यह बात कही। उनहोंने कहा कि इस अभियान में पुलिस, नगर नियोजकों, सेवा प्रदाताओं, परिवहन अधिकारियों, सामुदायिक समूहों और स्वयंसेवी संगठनों की भी मदद ली जाएगी।

प्रो. वालिया ने बताया कि दिल्ली सरकार इस अभियान की शुरुआत दिल्ली सरकार, यूनीफेम, जागोरी, और यूएन हैबिटेट के साथ मिलकर कर रही है जिसका उद्देश्य राजधानी को महिलाओं और कमजोर समूह के लिए ऐसे शहर का निर्माण करना है जहां वे सुरक्षित माहौल में रह सकें। उन्होंने कहा कि महिलाओं में सुरक्षा और संरक्षा के प्रति जागरूकता लाने के लिए जरूरी है कि उन्हें सामाजिक, आर्थिक और राजनीतिक सभी लिहाज से अधिकार संपन्न बनाया जाए।

स्वास्थ्य मंत्री ने कहा कि दिल्ली सरकार के भागीदारी कार्यक्रम के जरिए आवास कल्याण संघों, बाजार एसोसिएशनों और महिला संघों को जोड़ा जाएगा जिससे कि राजधानी में महिलाओं के लिए सुरक्षा और संरक्षा के कार्यक्रम को सफल बनाया जा सके। इस मौके पर यूनीफेम की क्षेत्रीय निदेशक एनी स्टेनहैमर ने उम्मीद जताई कि सभी लोग मिलजुल कर देश और दक्षिण एशिया के सामने एक मॉडल प्रस्तुत करेंगे।

मेरी बात...

महिलाओं की सुरक्षा के लिए सरकार दिल्ली पुलिस, ट्रांसपोर्ट विभाग, शहरी योजना विभाग व अन्य सरकारी महकमों की निश्चित जिम्मेदारी तय करेगी। प्रत्येक विभाग अपने-अपने क्षेत्र में सुरक्षा सुनिश्चित करेगा।

प्रो किरण वालिया, महिला विकास मंत्री (दिल्ली सरकार)

ताकि महिलाओं के लिए दिल्ली हो सुरक्षित

भास्कर न्यूज | नई दिल्ली

दिल्ली को महिलाओं के लिए सुरक्षित बनाने के लिए राज्य सरकार विशेष पहल करने जा रही है। एक कार्यक्रम के दौरान दिल्ली की स्वास्थ्य एवं महिला विकास मंत्री प्रो किरण वालिया ने कहा कि सरकार अब ऐसे कदम उठाने जा रही है जिससे राजधानी महिलाओं के लिए सुरक्षित बन सके। सरकार इस महत्वाकांक्षी योजना के लिए दिल्ली पुलिस, ट्रांसपोर्ट विभाग, शहरी योजना विभाग व अन्य सरकारी महकमों की निश्चित जिम्मेदारी तय करेगी। प्रत्येक विभाग अपने-अपने क्षेत्र में महिलाओं की सुरक्षा सुनिश्चित करेगा। वहीं पुलिस को महिलाओं से छेड़छाड़ संबंधी शिकायतों पर तुरंत कार्रवाई करने का कहा गया है।

दिल्ली सरकार अपना यह अभियान संयुक्त राष्ट्र के तहत काम करने वाली यूनीफेम व यूएन हेबिटाट के साथ मिलकर शुरू कर रही है। जागोरी नामक संस्था को भी इस अभियान में शामिल किया गया है। इस अभियान की शुरुआत बुधवार को कनॉट प्लेस स्थित सेंट्रल पार्क में आयोजित एक कार्यक्रम से हुई। प्रो वालिया ने सार्वजनिक स्थलों पर महिलाओं से होने वाली संस्था पर सबसे अधिक चिंता जाहिर की। सार्वजनिक स्थलों पर महिलाओं से छेड़छाड़ व हिंसा को रोकने के लिए दिल्ली सरकार योजनाबद्ध तरीके से काम करेगी। इसके लिए दिल्ली पुलिस के वरिष्ठ अधिकारियों, डीटीसी, मेट्रो आदि से संपर्क किया गया है। सरकार चाहती है कि सार्वजनिक परिवहन प्रणाली में महिलाओं के सम्मान व सुरक्षा का विशेष ध्यान रखा जाए। इसके लिए यदि सार्वजनिक वाहनों में विशेष इंतजाम के लिए कुछ बदलाव की जरूरत है तो वह तुरंत कर लिए जाना चाहिए। मसलन, पिछले दिनों मेट्रो में बढ़ती भीड़ व ट्रेनों की कमी का सबसे ज्यादा असर महिलाओं पर ही पड़ा था।

उधर, पुलिस को भी महिलाओं के प्रति अधिक संवेदनशील होने के निर्देश दिए गए हैं। यह आम शिकायत है कि दिल्ली पुलिस ज्यादातर मामलों में एफआईआर दर्ज नहीं करती। कई मामलों में तो सादे कागज पर शिकायत लिख मामले को रफा-दफा कर दिया जाता है। दिल्ली सरकार चाहती है कि मामलों को इस तरह न निपटाया जाए व छेड़छाड़ और हिंसा के मामलों के प्रति पुलिस पूरी सतर्कता बरते।

समाचार सार

सुरक्षित दिल्ली अभियान

जनसत्ता संवाददाता

नई दिल्ली, 25 नवंबर। राजधानी में सार्वजनिक स्थलों पर महिलाओं के खिलाफ हिंसा रोकने और उनकी सुरक्षा की कमी पर ध्यान देने के लिए यूनिफेम, जागोरी और यूएन हैबिटेट के सहयोग से दिल्ली सरकार ने बुधवार को 'महिलाओं के लिए सुरक्षित दिल्ली' अभियान शुरू किया। नई दिल्ली स्थित सेंट्रल पार्क में हुए एक समारोह में यह पहल की गई।

महिलाओं के लिए सुरक्षित दिल्ली अभियान के जरिए सरकार का मकसद एक ऐसे भारत के निर्माण की दिशा में काम करना है जहां महिलाएं व कमजोर समूह सुरक्षित रहें और सुरक्षित माहौल में वे आ जा सकें। इस मौके पर दिल्ली सरकार की स्वास्थ्य एवं परिवार कल्याण मंत्री प्रो. किरण वालिया ने कहा कि समग्र तरीके से भारत में महिलाओं की सुरक्षा पर ध्यान देने के लिए दिल्ली एक मॉडल का निर्माण करेगी। दिल्ली सरकार एक योजना बना रही है, जो बहु-युक्तिसंगत होगी।

अब सरकार को सोचना ही होगा

ज्ञानेंद्र रावत लेखक वरिष्ठ पत्रकार हैं।

गौरतलब है कि वेश्यावृत्ति को कानूनी मान्यता दिए जाने का सवाल 80 के दशक से बहस का मुद्दा बना हुआ है। इसको समय-समय पर बहाने लगाकर सरकार बराबर टालती रही है।

बीते दिनों वेश्यावृत्ति को कानूनी मान्यता दिए जाने के सवाल पर सुप्रीम कोर्ट द्वारा दिए गए निर्देश से बरसों से इस व्यापार को कानूनी जामा दिए जाने की मांग करने वाले संगठनों में उम्मीद जगी है। गैरसरकारी संस्था बचपन बचाओ आंदोलन की ओर से दायर जनहित याचिका और चाइल्ड लाइन की ओर से दाखिल हस्तक्षेप आवेदन पर न्यायमूर्ति दलबीर भंडारी और ए के पटनायक की पीठ ने केंद्र सरकार को निर्देश दिया है कि जब वह इसे कानूनन रोक पाने में नाकाम रही है तो फिर इसे क्यों न वैध बना दिया जाए।

पीठ का मानना है कि महिलाओं की तस्करी रोकने की दिशा में यह एक कारगर विकल्प हो सकता है, क्योंकि समूची दुनिया में किसी भी देश द्वारा आज तक कानून के जरिए यौन व्यापार पर पांबदी नहीं लगाई जा सकी है। कहीं-कहीं तो यह छद्म रूप से भी जारी है। इसलिए यह कदम इसका कारगर उपाय होगा। अब यह सरकार के ऊपर है कि वह इस मामले में क्या रुख अख्तियार करती है?

गौरतलब है कि वेश्यावृत्ति को कानूनी मान्यता दिए जाने का सवाल 80 के दशक से बहस का मुद्दा बना हुआ है। इसको समय-समय पर बहाने लगाकर सरकार बराबर टालती रही है। लेकिन पिछले दिनों कानूनी मान्यता की बात तो दीगर है, सरकार ने वेश्यालय जाने वालों पर दंड स्वरूप 50 हजार रुपए जुर्माना लगाने और उन्हें जेल में बंद करने पर भी विचार किया। उसका मानना था कि इस तरह वह वेश्यावृत्ति रोकने में कामयाब होगी। सरकार के बीते कार्यकाल में तत्कालीन केंद्रीय महिला एवं बाल विकास मंत्री रेणुका चौधरी द्वारा संसद में प्रस्तुत अनैतिक गतिविधियां निरोधक संशोधन कानून में शामिल इस प्रावधान का सरकार के बाहर तो विरोध हुआ ही, उसके अंदर भी व्यापक विरोध हुआ। विरोधियों ने दलील दी कि इससे देह व्यापार रुक तो नहीं पाएगा, बल्कि इसका स्वरूप और बदल जाएगा। नतीजतन जहां वेश्याओं की निगरानी मुश्किल हो जाएगी, वहीं उनके एड्स की चपेट में आने की संभावना और बलवती हो जाएगी।

गौरतलब है कि प्रधानमंत्री के आर्थिक सलाहकार व एशिया पैसिफिक एरिया में बने न्यूट्रल कमीशन के सी रंगराजन की अध्यक्षता वाली कमेटी की एचआईवी पर जारी स्टडी ग्रुप की रिपोर्ट ने खुलासा किया कि एशिया में एड्स का वायरस पुरूषों द्वारा सेक्स हेतु पैसा देने की प्रवृत्ति के चलते बड़ी तेजी से बढ़ रहा है।

वेश्याओं की मांग है कि उन्हें कानूनी अधिकार मिले, उनके साथ जोर-जबरदस्ती-अत्याचार न हो। कानून का संरक्षण-अधिकार ही उनके लिए सबसे बड़ी उपलब्धि होगी। यूपीए सरकार की शुरुआत के समय महिला व बाल विकास राज्य मंत्री ने वेश्याओं को लाइसेंस देने की मांग की थी।

इससे उन्हें जहां पुलिसिया आतंक और शोषण से निजात मिलेगी, वहीं समाज में समानता के अधिकार के साथ जीने व अपनी संतानों को राष्ट्र की मुख्यधारा में लाने में मदद मिलेगी। लेकिन आज तक यह मुद्दा संसद में विचार के लिए नहीं उठा और न इस पर मत्रिमंडलीय समिति में विचार ही हुआ।

खैर अब समय आ गया है कि इस पर सरकार गंभीरता से सोचे और समाज के अभिन्न अंग इन वेश्याओं के इस मसले का शीघ्र निपटारा करे। यदि सरकार ने इनके पक्ष में निर्णय लिया तो यह उसके विवेक और दूरदर्शिता का प्रतीक होगा।

rawat.gyanendra@gmail.com

देह व्यापार के सवाल

आधी दुनिया

अलका आर्य

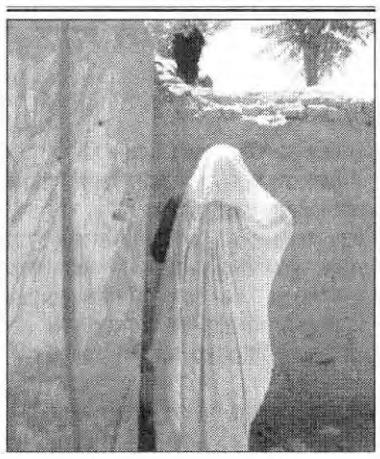

कानूनी मान्यता के बाद वेश्यावृत्ति में वृद्धि होगी और छोटी लड़कियों की मांग पहले की तुलना में अधिक होगी।

देश की सर्वोच्च अदालत ने देह व्यापार को कानूनी जामा पहनाने के सवाल पर हाल ही में जो टिप्पणी की है, उससे बहस को ताजगी मिल गई है। हालांकि समाज इस मुद्दे पर दो खेमों में बंट गया है। एक कानूनी दर्जा देने के समर्थन में है तो दूसरा कड़ा विरोध कर रहा है। नौ दिसंबर को शीर्ष अदालत ने एक गैरसरकारी संगठन की ओर से दायर जनहित याचिका और 'चाइल्डलाइन' की ओर से दाखिल हस्तक्षेप आवेदन पर सुनवाई के दौरान केंद्र सरकार से पूछा था कि अगर सरकार के लिए दंडात्मक कार्रवाई से वेश्यावृत्ति पर पांबदी लगाना व्यावहारिक तौर पर संभव नहीं हो तो क्या वह वेश्यावृत्ति को वैध बना सकता है। अदालत की पीठ ने सॉलिसिटर जनरल से कहा,' जब आप कहते हैं कि वेश्यावृत्ति पर आप कानूनन पाबंदी लगाने में सक्षम नहीं है तो आप इसे वैध क्यों नही बना देते।' शीर्ष अदालत ने अपनी टिप्पणी में केंद्र सरकार को सुझाव भी दिया कि महिलाओं की तस्करी रोकने के लिए यौन व्यापार को वैध बनाना एक बेहतर विकल्प होगा। क्योंकि दुनिया में कहीं भी दंडात्मक उपायों से उस पर पाबंदी नहीं लगाई जा सकी है। कुछ मामलों में इसका संचालन छद्म रूप से हो रहा है, इसलिए आप इसे क्यों नहीं वैध बना देते।

इस जनहित याचिका में देश में बड़े पैमाने पर बाल तस्करी- खासतौर पर बच्चियों को यौन व्यापार में ढकेले जाने की शिकायत की गई थी। याचिका दायर करने वालों का मानना है कि बच्चों/ लड़कियों को यौन शोषण से बचाने के लिए उचित कानून होना चाहिए। अहम सवाल यह है कि जो लोग शीर्ष अदालत की इस टिप्पणी 'वेश्यावृत्ति वैध बनाना बेहतर विकल्प' को अपने समर्थन में भुनाने में लगे हैं, वे क्या कानून बनने के बाद अपने परिवार की लड़कियों को इस पेशे में जाने की इजाजत देंगे। समर्थक यह भी दलील दे सकते है कि वेश्यावृत्ति की समस्या को नैतिकता के दायरे में नहीं बल्कि वस्तुस्थिति के आईने में देख कर हल निकालना होगा। बहरहाल देह व्यापार को कानून बनाने के पक्ष में मजबूत दलील दी जा रही है। कहा जा रहा है कि इससे देश में महिलाओं और लड़कियों की तस्करी पर अंकुश लगेगा।

राष्ट्रीय मानवाधिकार आयोग का कहना है कि वेश्यावृत्ति में आने वाली लड़की की औसतन उम्र नौ से तेरह के बीच होती है। आयोग की एक रपट के मुताबिक अपने देश में 44.3 फीसद वेश्या इस धंधे में जब लाई गईं तब वे बच्ची थीं। यौन उद्योग की बढ़ रही मांग के मद्देनजर पड़ोसी देश बांग्लादेश व नेपाल से बच्चों की तस्करी हो रही है। लेकिन कानूनी मान्यता के बाद सचमुच इस तरह की तस्करी पर अंकुश लग जाएगा ? यह सवाल इसलिए पूछा जा रहा है क्योंकि विदेशों में जहां-जहां वेश्यावृत्ति कानूनन मान्य है, वहां इसमें अधिक सफलता नहीं मिली। आस्ट्रेलिया व नीदरलैंड में वेश्यावृत्ति कानूनन अपराध नहीं है। कानूनी मान्यता मिलने के बाद आस्ट्रेलिया में वैध वेश्यालय काफी संख्या में खुले लेकिन हैरत यह जानकर होती है कि वहां एक साल के दौरान गैरकानूनी वेश्यालय खुलने की संख्या में तीन सौ गुना का इजाफा हुआ। वैध देह व्यापार के कारण आस्ट्रेलिया सेक्स टूरिस्टों की सूची में शामिल हो गया और उनकी मांग को पूरा करने के लिए वैध वेश्यालयों में लड़कियां कम पड़ गईं, तब मांग को पूरा करने के लिए दक्षिण पूर्व एशिया से लड़कियों की तस्करी की जाने लगी।

नीदरलैंड की राजधानी एमस्टेरडम भी अपवाद नहीं है। वहां भी इस पेशे में डच यानी नीदरलैंड की लड़कियों से ज्यादा पूर्वी यूरोप व उत्तरी अफ्रीका की लड़कियां नजर आएंगी। जिन मुल्कों में देहव्यापार अपराध नहीं है, वहां की सेक्स वर्कर भी खुद को ज्यादा सुरक्षित महसूस नहीं करतीं। वे भी हिंसा की शिकार होती रहती हैं। कुछ लोगों का मानना है कि वैधानिक मान्यता मिलने से इस पेशे में शामिल लड़कियों/ औरतों की यातनाओं का अंत हो जाएगा। दलाल या पुलिस उन्हे तंग नहीं करेगी। पुलिस इस पेशे में लगी महिलाओं से जो हफ्ता वसूलती है, उससे मुक्ति मिलेगी। यह दलील देने वाले अपने देश में पुलिस का चरित्र क्यों भूल जाते हैं। बेशर्म पुलिस रिक्शा चालकों, रेहड़ी वालों तक से हफ्ता वसूलती है। कानूनी मान्यता मिलने पर पुलिस और दलालों के अत्याचारों से उतनी मुक्ति नहीं मिलने वाली, जितना उसका गुब्बारा फुलाया जा रहा है। न तो इससे बाल तस्करी खासतौर पर लड़कियों की तस्करी पर बहुत अंकुश लग पाएगा। उल्टे कानूनी मान्यता के बाद वेश्यावृत्ति में वृद्धि होगी और छोटी लड़कियों की मांग पहले की तुलना में अधिक होगी।

औरतों की सेहत के लिए फिक्रमंद स्वास्थ्य कार्यकर्ताओं का कहना है कि अगर केंद्र सरकार ने शीर्ष अदालत का सुझाव मान लिया तो उससे सेक्स वर्करों की सेहत भी सुधर सकती है। उनकी चिकित्सीय सुविधाएं बढ़ जाएंगी। कुछेक की राय में सेक्स वर्कर को श्रम कानूनों के तहत संरक्षण मिलेगा। ऐसा होने से उन्हें कई लाभ मिलेंगे और उनके बच्चों की जिंदगी भी आसान हो जाएगी। दरअसल शीर्ष अदालत ने अपनी इस टिप्पणी में यह भी कहा है कि बाल तस्करी और यौन उद्योग गरीबी के कारण फलाफूला, इसलिए गरीबी की समस्या का हल निकालने की जरूरत है। हम जीडीपी में हुई वृद्धि का जिक्र करते हुए इस तथ्य को नजरअंदाज कर देते हैं कि यह कैसा विकास है जिसमें गरीबी रेखा से नीचे जीवन यापन करने वालों की तादाद 30 से बढ़कर 37 फीसद हो गई है। यह एक सच है कि गरीब परिवार की लड़कियां ही इस धंधे में जबरन बैठा दी जाती हैं। अगर सरकार इस समस्या को लेकर संवेदनशील है तो उसे उन परिस्थितियों के खिलाफ लड़ना होगा। औरत को पढ़ाई लिखाई, अपने पैरो पर खड़ा होने के ज्यादा से ज्यादा सम्मानजनक मौके मुहैया कराने होंगे। इस धंधे से मुक्त लड़कियों के पुनर्वास की योजनाओं को सशक्त तरीके से लागू कराने पर पुनर्विचार करना होगा। यौन शोषण करने वालों व लड़कियों के तस्करों को कड़ी से कड़ी सजा देनी होगी। जिस कानूनी सुरक्षा कवच की आड़ में उनकी बेहतरी की दलील दी जा रही है, उन्हें सुरक्षित होने का जो अहसास कराया जा रहा है वह कितना नकली है, उसे भी समझना होगा। ❑

मुक्ति नहीं दे सकते तो सुरक्षा ही दें

मुद्दा | **मल्लिका साराभाई**

एक आदर्श समाज में पुरुष को किसी स्त्री को खरीदना नहीं पड़ेगा और स्त्री सिर्फ देह नहीं होगी। लेकिन ऐसा समाज अभी कोसों दूर है। ऐसे में क्या यह ठीक नहीं कि उन्हें सुरक्षा दी जाए और काम की जरूरतों के अनुरूप लाभ दिए जाएं?

सुप्रीम कोर्ट के हाल के प्रस्ताव कि सरकार को देह व्यापार को वैध कर देना चाहिए पर टेलीविजन के लिए आयोजित एक बहस में मैं भी शामिल थी। जैसाकि बहुत से लोग समझते हैं, उसके ठीक उलट भारत में देह व्यापार प्रतिबंधित नहीं है। लड़कियों की अवैध खरीद-फरोख्त प्रतिबंधित है। रेडलाइट इलाके यद्यपि गैरकानूनी हैं, लेकिन वे खूब फलते-फूलते हैं। न सिर्फ वेश्यालय के मालिकों और दलालों, बल्कि पुलिस के द्वारा भी सेक्स वर्करों का शोषण होता है। ऐसा माना जाता है कि देश में तकरीबन एक करोड़ सेक्स वर्कर हैं, जिनमें से तीस प्रतिशत नाबालिग हैं। पूरी दुनिया की अवैध खरीद-फरोख्त के लिए भारत एक माध्यम और अड्डा बन गया है।

लेकिन सवाल यह है कि क्या इसे वैध करने से सेक्स वर्करों के मानवाधिकारों की रक्षा हो सकेगी या इससे अवैध खरीद-फरोख्त के दरवाजे खुल जाएंगे। इस सवाल के भीतर कई बातें छिपी हुई हैं। जैसाकि बहस में भी हुआ, इस सवाल पर हमारी तथाकथित भारतीय संस्कृति की दुहाई देना बहुत आसान है कि पश्चिमी मूल्य भारतीय नारियों को पवित्र सीता और सावित्री की आंखों में धूल झोंकने का लाइसेंस दे रहे हैं। और ज्यादा अलंकारपूर्ण शब्दों में कहें तो हमेशा ही कुछ ऐसा सवाल पूछा जाता है, 'क्या आप अपनी बेटियों और बहनों को वेश्या बनाना चाहते हैं?' देह व्यापार को वैध करार देने के विरोध में ये तर्क हैं : इससे औरतों, खासकर नाबालिगों की खरीद-फरोख्त के दरवाजे खुल जाएंगे। इससे एक सामान्य औरत के सबके सामने नग्न होने के लाइसेंस को सामाजिक स्वीकृति मिल जाएगी। इससे ऐसा प्रतीत होगा कि हम स्त्री देह के शोषण को स्वीकृति दे रहे हैं। ऐसे विचार रखने वाले लोगों का मानना था कि यह व्यापार अलग तो होना चाहिए, लेकिन वैध नहीं। इसे वैध किए जाने के पक्ष में कुछ इस तरह के तर्क थे : आज सेक्स वर्कर हमेशा पकड़े जाने, शोषण, मारपीट और इस्तेमाल किए जाने से भयभीत होती हैं। अगर उनका काम वैध होगा तो यह स्थिति बदलेगी। उनके काम को वैध ठहराने का अर्थ होगा, उन्हें वे सभी सुरक्षाएं, जैसे मेडिकल सुविधा, बच्चों की सुरक्षा, सम्मान आदि देना जो किसी अन्य सेवा क्षेत्र के व्यक्ति को प्राप्त होती हैं। उन्हें पकड़े जाने और दंडित होने का भय भी नहीं होगा।

मेरा मत इस प्रकार है। हम एक ऐसे लिंगभेद आधारित समाज में रहते हैं, जो स्त्री और उसकी देह के प्रति पूर्वाग्रहों से ग्रस्त है। हम ऐसे समाज में रहते हैं, जहां औरत के साथ हिंसा होती है, जहां वैवाहिक जीवन में बलात्कार सामान्य बात है और उसे पत्नी का कर्तव्य माना जाता है। बेशक एक आदर्श समाज में पुरुष को किसी स्त्री को खरीदना नहीं पड़ेगा और स्त्री सिर्फ देह नहीं होगी। लेकिन ऐसा समाज अभी कोसों दूर है। यह देखते हुए कि पुरुष को सेक्स खरीदने की जरूरत है और स्त्रिया गरीबी, भूख और धमकियों के डर से अपनी देह के बलबूते रोटी कमाने को मजबूर हैं। ऐसे में क्या यह ठीक नहीं कि उन्हें सुरक्षा दी जाए और उन्हें उनके काम की जरूरतों व मांग के अनुरूप लाभ दिए जाएं? कहा जा रहा है कि वैध करार देने से सेक्स व्यापार की मांग बढ़ेगी पर प्रतिबंध लगाने से मांग ज्यादा बढ़ेगी।

लेखिका प्रसिद्ध नृत्यांगना व सामाजिक कार्यकर्ता हैं।

जागोरी JAGORI

निशुल्क प्रतियों के लिए संपर्क करें -

जागोरी बी-114 शिवालीक मालवीय नगर, नई दिल्ली-110017, फ़ोनः 26691219, 26691220

email: resource@jagori.org/jagori@jagori.org

www.jagori.org